अनुक्रमणिका

विषय-सूची — पृष्ठ-संख्या

१.'अहं' से अधर्म ०३
२.भगवन्नाममय सम्पूर्ण सृष्टि.....०५
३. धाम में कैसे रहें ?.....०८
४. प्रीति-रीति 'सेवाराधन'.....११
५. निष्कपटता भगवान् को अतिप्रिय..१४
६. साधुसेवानिष्ठ दीनबन्धुदासजी.....१७
७. भक्ति का प्रतिबिम्ब 'गौ-आराधन'...२२
८. श्रीकृष्ण की प्रेमाधीनता.....२६
९. भक्ति का परिपोषक 'वैराग्य'.....२९
१०. दाहोद (गुजरात); में बरसानावासिनी श्रीमुरलिकाजी की कथा ३१
११. श्रीमाताजी गौशाला' में संत श्रीराजेन्द्रदासजी महाराज की गौ-भक्तमाल कथा का आयोजन ३२

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो ||
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो ||
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो ||

-पूज्य श्री बाबा महाराज कृत

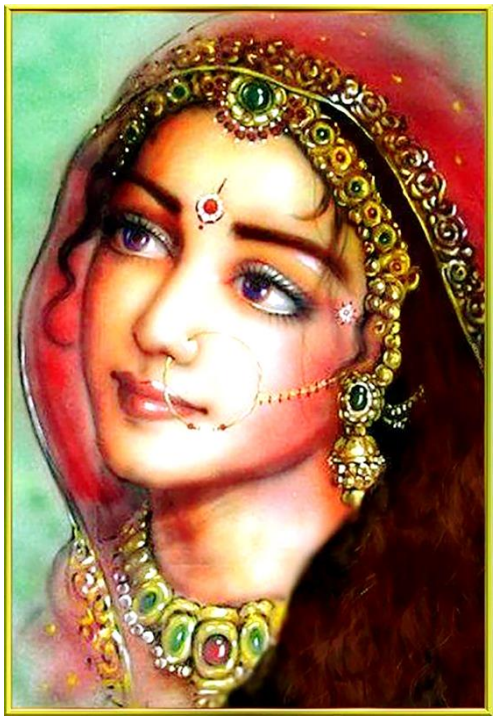

संरक्षक- **श्रीराधामानबिहारीलाल**

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,

गह्वरवन , बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)

(Website :www.maanmandir.org) (E-mail :ms@maanmandir.org)

mob. : 9927338666, 9837679558

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप बाबाश्री के प्रातःकालीन सत्संग का ८ से ९ बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि ||

(श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

प्रकाशकीय

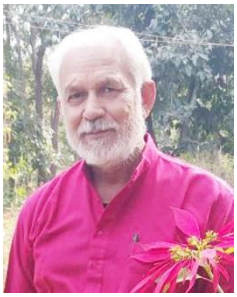

महापुरुषों की वाणियाँ जीव कल्याण में तभी सार्थक होंगी जब प्राणी गृहमेधिसुखों (गृहासक्त लोगों का मैथुनी भोग) की वासनाओं से दूर रहेगा | यही कारण है लोग बड़े-बड़े महापुरुषों को सुनते हैं फिर भी वास्तविक सुख से वंचित ही रहते हैं | हम छोटी-छोटी वस्तुओं से, वस्त्र आभूषणों से अथवा धनी-मानी-सम्मानी प्राणियों से आकृष्ट हो जाते हैं तो भला शास्त्र ज्ञान या आप्तवाणी हमारा क्या भला करेगी?

न तस्य तत्त्वग्रहणाय साक्षाद् वरीयसीरपि वाचः समासन् |

स्वप्ने निरुक्त्या गृहमेधिसौख्यं न यस्य हेयानुमितं स्वयं स्यात् ||

(श्रीमद्भागवतजी ५/११/३)

उक्त कथन का आशय यह नहीं कि किसी महापुरुष को सुना ही नहीं जाए अथवा शास्त्रानुशीलन भी किया ही नहीं जाए | यह भी सत्य है कि यदि कोई निष्किंचन महापुरुष का संग जीवन में मिल जाये तो वे निश्चय ही स्वाश्रितों को बिल्कुल वासनाशून्य बना देंगे और भगवान् की बलवती माया उनका स्पर्श तक भी नहीं कर सकेगी | काकभुशुण्डिजी के आश्रम में योजनपर्यन्त माया का प्रवेश नहीं था | बात केवल पुरातनकाल तक ही सीमित नहीं है, इस कलिकाल में भी ऐसे अनेक महापुरुष अवतरित हुए हैं जिन्होंने युगधर्म तक को बदलकर रख दिया जो स्वयं भगवान् भी नहीं कर पाते हैं | आज भी भौतिक चकाचौंध से सुदूर ब्रजवसुंधरा की पावन श्रीकृष्णलीलास्थली मानगढ़ में विराजमान संतप्रवर श्रीरमेशबाबामहाराज ने अपनी अलौकिक रहनी से लाखों जीवों को सन्मार्ग की ऐसी राह दिखाई कि उनके माध्यम से लोक कल्याण की पावन सरिता प्रवाहित हो उठी है | किसी का हृदय परिवर्तित तभी होता है जब हमारा स्वयं का जीवन इह लौकिक और पारलौकिक वासनाओं से शून्य हो | बाबा महाराज की वाणी को जन-जन तक पहुँचाने के उद्देश्य से हमारी मासिक पत्रिका “मानमन्दिर बरसाना” प्रकाशित की जाती है ताकि सभी पाठक उसके माध्यम से अलौकिक सुख की अनुभूति कर सकें और मिथ्या सुख को छोड़ सकें | दुःखमय संसार में सुख की कल्पना करने वाला महा अज्ञानी और मूढ़ प्राणी ही है |

राधाकांत शास्त्री

व्यवस्थापक, मान मन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

'अहं' से अधर्म

श्रीबाबामहाराज के प्रातःकालीन सत्संग (१४,१५/१२/२००६) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी माधुरीजी, मानमंदिर, बरसाना

असली धर्म तो भारतीय-संस्कृति में है, जहाँ सांसारिक विषयभोगों से निवृत्ति का पाठ पढ़ाकर विशुद्ध भक्तियोग की शिक्षा दी जाती है | पाश्चात्य देशों में पशु-वृत्ति है, जैसे - कुत्ता को जब भोग की इच्छा हुई तो कुतिया के पास चूँ-चूँ करता है, प्रेम दिखाता है, उसके बाद कुतिया को काट लेता है; वैसे ही वहाँ केवल भोगबुद्धि का सम्बन्ध है, जो पशु-संस्कृति है, जिस प्रकार पशु आपस में निभाते नहीं हैं, कुत्ता, गधा आदि पशुओं के न कोई बहू है, न बेटा है, न इनका कोई सम्बन्ध है, न इनका कोई रिश्ता है, उसी प्रकार से उन भोगी देशों का हाल है, भोगेच्छा हुई तो मिल लिये, उसके बाद न मैं तेरी, न तू मेरा | इसलिए पाश्चात्य संस्कृति (विदेशी संस्कृति) बिल्कुल पशुओं की तरह है, जहाँ केवल पशु-धर्म है, किसी प्रकार का निर्वाह नहीं है, यहाँ तक कि एक छोटा-सा बच्चा भी माँ-बाप की डाँट को नहीं सह सकता; हमारे **भारत देश** में तो माँ-बाप की आज्ञा से **'राम'** चौदह वर्ष के लिए वन में चले गये, राजपाट छोड़ दिया, स्त्री छूट गई फिर भी माँ-बाप को दोषी नहीं माना क्योंकि हमारे देश में मातृभक्ति-पितृभक्ति है; हमलोग इसे ऊँचा मानते हैं लेकिन पशु-संस्कृति वाले पश्चिमी सभ्यता के लोग इसे नीचा मानते हैं | इसलिए हमारी दृष्टि में पश्चिमी देशों में पशु-धर्म के अलावा कोई धर्म नहीं है, केवल खाओ-पियो, मौज उड़ाओ, न उनका कोई माँ है, न बाप है | माता-पिता की सेवा उनके देश में कोई नहीं करता | पश्चिमी देशों में बूढ़े माता-पिता को कोई नहीं पूछता इसलिए वहाँ केवल पशु-धर्म है | भक्ति (भागवत धर्म) के लिए 'तप, पवित्रता, दया और सत्य' ये चारों चीजें बहुत जरूरी हैं | अधर्म के चरण स्मय (अहं) से तप या भजन नष्ट होता है | अहं करना कि हम साधु हैं, विरक्त हैं, ये सब बातें गलत हैं | श्रीचैतन्यमहाप्रभु ने कहा है –

नाहं विप्रो न च नरपति-र्नापि वैश्यो न शूद्रो,
नाहं वर्णी न च ग्रहपतिर्नो वनस्थो यतिर्वा |
किन्तुप्रोद्यन्निखिल-परमानन्द-पूर्णामृताब्धे-
र्गोपी- भर्त्तुः पदकमलयोर्दास-दासानुदासः||

अपने को साधु समझना भी अज्ञान है | किसी भी प्रकार का 'अहं' भजन को नष्ट कर देता है | **अहं** 'दीनता' तो आने ही नहीं देगा | उसी प्रकार किसी भी प्रकार की आसक्ति होगी, वह अन्तःकरण को गंदा कर देगी | इसलिए भगवान् ने कहा –

जननी जनक बन्धु सुत दारा |
तनु धनु भवन सुहृद परिवारा ||
सब कै ममता ताग बटोरी |
मम पद मनहि बाँध बरि डोरी ||

(श्रीरामचरितमानसजी, सुन्दरकाण्ड - ४८)

ममता चाहे माँ में है, बाप में है, भाई, स्त्री-पुत्र आदि में है, सब गलत है | चाहे तन में ममता है, धन में ममता है जबकि शरीर और धन में सबकी ममता रहती है, साधु को भी दक्षिणा में दस रुपया मिलता है तो वह रख लेता है; इसी प्रकार घर में, कुटिया में, परिवार में जहाँ कहीं भी ममता है, वह अन्तःकरण को अपवित्र कर देती है | ममता-आसक्ति को छोड़कर संसार में काम करो, तब तुम भगवान् के भक्त बन सकते हो | जैसा कि भगवान् ने कहा – **गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः |**

यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ||(श्रीगीताजी ४/२३)

आसक्ति छोड़ने के बाद ही तुम भगवान् के लिए आचरण कर पाओगे | भगवान् की ओर चलने के लिए आसक्ति को छोड़ना आवश्यक है | भागवत में भी कहा गया है –

यत्रानुरक्ताः सहसैव धीरा व्यपोह्य देहादिषुसङ्गमूढम् |
व्रजन्ति तत्पारमहंस्यमन्त्यं यस्मिन्नहिंसोपशमः स्वधर्मः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/१८/२२)

देह और कुटुम्ब – स्त्री, पुत्र, सगे-संबन्धीजन आदि गृहस्थियों में आसक्ति की मूढ़ता को छोड़ देना चाहिए, तब मनुष्य भगवान् के परम पद में पहुँचता है | आसक्ति से अन्तःकरण गंदा हो जाता है |

अधर्म के तीसरे चरण 'मद' से धर्म का तीसरा चरण 'दया' नष्ट हो जाती है | अगर आपका अपने पड़ोसी से बैर है, उसके घर मुसीबत आती है तो आप खुश होते हैं | साधु-समाज में चले जाओ तो वहाँ जाड़े के मौसम में बहुत से कम्बल कमरों में भरे हुए होते हैं लेकिन कोई साधु वहाँ रुकने के लिए आता है तो उसे कम्बल नहीं देते हैं क्योंकि उनमें 'मद' होता है, **दया** नहीं होती है | 'मद' भी अनेक तरह का होता है, जैसे – शरीर का मद है, रामराज्य का उदाहरण है कि एकबार कोई महन्तजी जा रहे थे, रास्ते में कोई कुत्ता लेटा था, उन्होंने किसी अपराध के कारण कुत्ते को जोर से डंडा मार दिया क्योंकि महंतजी खा-पीकर मोटे हो गये थे, इसलिए 'शरीर के मद' के कारण कुत्ते को डंडा मार दिया | इसलिए 'मद' से दया नष्ट हो जाती है | असत्य से सत्य नष्ट हो जाता है | युधिष्ठिरजी ने थोड़ा-सा झूठ का आश्रय लिया तो उनको नरक का दर्शन करना पड़ा था | फिर हमलोग तो दिन-रात झूठ बोला करते हैं | यह युग (कलियुग) ही ऐसा बन गया है –

झूठइ लेना झूठइ देना | झूठइ भोजन झूठ चबेना ||

(श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड – ३९)

धर्म के चार चरण हैं - तप, पवित्रता, दया और सत्य; ये अधर्म के चार चरण से नष्ट होते हैं – अहं से तप या भजन नष्ट होता है, आसक्ति से अन्तःकरण की पवित्रता नष्ट हो जाती है, मद से दया नष्ट हो जाती है तथा असत्य से सत्य नष्ट हो जाता है | कलियुग में धर्म के तीन चरण तो टूट गये हैं | 'कलि' का अर्थ है - कलह-लड़ाई | लड़ाई क्यों होती है? क्योंकि हर आदमी में अहं (ऐंठ) बढ़ जाता है | सेवा वही कर सकता है, जो अपने को छोटा मानता है | चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) के लिए प्राचीन भारत में भक्तिमार्ग खुला था | स्वयं भगवान् ने कहा –

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः |
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी ९/३२)

चाहे स्त्री है, चाहे वैश्य है, चाहे शूद्र है, सबको भजन का अधिकार है, भगवान् के आश्रय से ये भी परमगति को प्राप्त होते हैं लेकिन कार्य की दृष्टि से ऊँचा-नीचापन रखना पड़ता है | किसी ऑफिस में कोई मैंनेजर है, कोई चपरासी है | सेवा-कार्य की दृष्टि से उनमें ऊँचा-नीचापन नहीं रखा जायेगा तो काम कैसे चलेगा | जो क्लर्क होते हैं, वे मैंनेजर के नीचे होते हैं | कहीं भी मकान बनता है तो एक मिस्त्री होता है, उसके नीचे मजदूर होते हैं | ऊँचा-नीचापन तो रखना ही पड़ता है क्योंकि उसके बिना कार्य नहीं चल सकता | पुलिस विभाग में जाओ तो एक एस.पी. होता है और एक सिपाही होता है | सब जगह ऐसा वर्गीकरण होता है क्योंकि उसके बिना कोई काम नहीं चल सकता | ऊँचा-नीचापन केवल कार्य की दृष्टि से रखा गया, **तत्त्वदृष्टि** से नहीं | भगवान् कहते हैं कि मेरे लिए सब समान हैं |

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः |
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम्॥

भगवान् की शरण में जीव चला जाए तो काल कुछ नहीं कर सकता |

भगवन्नाममय सम्पूर्ण सृष्टि

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (नाम महिमा) २२/०५/२०१० से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी नवलश्रीजी, मानमंदिर, बरसाना

'अहं' के तीन भाग हैं - सात्विक अहंकार है करने वाला कर्ता), राजस अहंकार है क्रिया या क्रिया के साधन और तामस अहंकार है कार्य यानि कि द्रव्य | जैसे - तुम लड्डू खाते हो, लड्डू है द्रव्य, खाना है क्रिया, खाने वाला है कर्ता अहं कि बड़ा मीठा है | लड्डू है कार्य, जितने पंचभूत, शरीर आदि हैं, ये सब कार्य हैं | 'क्रियायें' ये राजस हैं | इसको गीता से समझो –

कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते ।
पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १३/२०)

'कार्य, करण, कर्तृत्व' ये तीन चीजें हैं - 'कार्य' माने सारा संसार, 'करण' अर्थात् क्रिया और क्रिया के साधन व कर्ता; इन तीनों चीजों की प्रकृति ही हेतु है | पुरुष भोक्ता बन जाता है, क्यों बन जाता है? पुरुष तीनों चीजों से अलग है, वह कुछ नहीं कर रहा है | गीताजी के (१३/२१) वें श्लोक में बताते हैं कि पुरुष भोक्ता क्यों बनता है, जैसे देवरानी, जेठानी में लड़ाई हुई और दोनों भाइओं में लट्ठ बज गये, झगड़ा था स्त्रियों का और मर गये दोनों भाई, क्योंकि उनकी स्त्री में आसक्ति थी | इसलिए भगवान् गीता १३/२१ में कहते हैं –

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान् ।
कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १३/२१)

संसार की आसक्ति ही सबका मूल है, पुरुष तो एकदम अलग है | तो देखो सात्विक अहंकार से इन्द्रियों के देवता बने, राजस अहंकार से इन्द्रियाँ बनीं और तामस अहंकार के पाँच बेटे हुए उनको पंच तन्मात्रा कहते हैं या सूक्ष्म महाभूत कहते हैं और इन्हीं के बेटे हैं - स्थूल महाभूत |

"क्षिति जल पावक गगन समीरा |"

'सूक्ष्म तन्मात्रा' उनका सूक्ष्म रूप है और स्थूल महाभूत उनका स्थूल रूप है | **क्षिति जल पावक गगन समीरा |** ये स्थूल रूप है और शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध तन्मात्रा ये सूक्ष्म रूप है | पंच महाभूतों की जननी पंच तन्मात्राएँ हैं जो कि तामस अहंकार से पैदा हुईं | बिना इसके समझे नाम महिमा नहीं समझ सकते हो, भगवान् को नहीं समझ सकते हो | बहुत से लोग कहते हैं ये सब फालतू का विषय है, समझ में नहीं आया तो कहते हैं कि व्यर्थ का विषय है | देखो, जैसे – 'तुम्हारा शरीर है मर गया तो इसको जला दिया, जला दिया तो क्या हुआ? राख बन गया | फिर राख को पानी में बहा दिया, तो वह पानी बन गया | वह मिट्टी पानी बन गयी, पानी का तेज से सम्पर्क किया तो तेज बन कर के वह वायु बन गया | तो ये क्या हो रहा है? ये धीरे-धीरे स्थूल से सूक्ष्म में जा रहा है | मिट्टी पानी बनी, फिर तेज फिर वायु फिर वह जाकर के आकाश में लीन हो गयी, सूक्ष्म रूप होता जा रहा है, ये है प्रलय | आकाश जाकर के तामस अहंकार में लीन हो गया | 'तामस अहंकार' महत्तत्व में और महत्तत्व जाकर के व्यक्त में तथा व्यक्त जाकर के अव्यक्त में व अव्यक्त जाकर के भगवान् में लीन हो गया | सारी सृष्टि पहले प्रकृति में लीन होती है, और फिर वह प्रकृति जाकर के भगवान् में लीन हो जाती है और वह प्रकृति इतनी सूक्ष्म है, इस बात को भगवान् कहते हैं –

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम् ।
कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम् ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी ९/७)

सभी प्राणी प्रकृति में लीन हो जाते हैं | तो यह जो शब्द ब्रह्म है, ये सूक्ष्मतम है | इसी की शक्तियों का विकास अनंत ब्रह्मांड है | यह हमारे यहाँ के महात्माओं ने खोज किया, इस बात को भगवान् भी कहते हैं ८वें अध्याय के १३वें श्लोक में - **ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म** एकाक्षर ब्रह्म है, ओम क्या है? ये नाम है, एक वस्तु के कई नाम हैं | उस ब्रह्म के नाम हैं –

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १७/२३)

उपनिषदों में ब्रह्म के कई नाम हैं | भगवान् के सभी नाम दिव्य होते हैं, सृष्टि का उस नाम से विकास होता है | इन्हीं नामों से ब्राह्मणों का, वेदों का, वेद में अनंत सृष्टि का वर्णन आया है, इन्हीं नाम से अनेक यज्ञों का कर्मों का विस्तार हुआ | इसलिए बुद्धिमान् लोग पहले भगवान् का नाम लेकर तब कोई काम करते हैं |

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपः क्रियाः ।
प्रवर्तन्ते विधानोक्तः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १७/२४)

बिना भगवन्नाम के सब कुछ व्यर्थ है, यज्ञ, दान, तप आदि ये सब बिना भगवन्नाम के बिल्कुल बेकार हैं |

राम नाम को अंक है, सब साधन हैं सून ।
अंक गएँ कछु हाथ नहिं, अंक रहें दस गून ॥
(तुलसीदासजी कृत दोहावली)

अथवा भागवत से समझो –

मन्त्रतस्तन्त्रश्छिद्रं देशकालार्हवस्तुतः ।
सर्वं करोति निश्छिद्रं अनुसंकीर्तनं तव ॥

(श्रीमद्भागवतजी ८/२३/१६)

सब साधनों की पूर्ति नाम से होती है | ब्रह्मवादी लोग भी नाम लेकर कोई कार्य करते हैं |

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपः क्रियाः ।
प्रवर्तन्ते विधानोक्तः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी१७/२४)

फिर मुमुक्षु भी भगवन्नाम से भवसागर से पार होगा –

तदित्यनभिसन्धाय फलं यज्ञतपःक्रियाः।
दानक्रियाश्च विविधाः क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १७/२५)

जब वह फल को छोड़ देगा तब भगवन्नाम चलेगा, निष्काम भगवन्नाम लेगा तब वह मुमुक्षु बनेगा, ये शर्त है | हम लोग नाम को बेचते हैं, पैसा कमाते हैं, व्यापार बनाते हैं, इसलिए नाम का फल नहीं मिलता | हम लोग नाम बेचते हैं, कथा बेचते हैं, कीर्तन बेचते हैं | मोक्ष चाहने वाले भी भगवन्नाम को लेकर के चलते हैं | तब फिर वे मुक्त हो जाते हैं | फिर 'सद्' शब्द को लिया –

सद्भावे साधुभावे च सदित्यतत्प्रयुज्यते ।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १७/२६)

'सद्' भी ब्रह्म का नाम है, 'सद्भाव' जहाँ-जहाँ अवतार होता है और 'साधुभाव' जो कि दैवी सम्पत्तियाँ हैं, वह सब 'सद्' है |

यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते ।
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्यवाभिधीयते ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी १७/२७)

दान में जो श्रद्धा है, भक्ति है, वह भक्ति भी सद् है | श्रद्धा भी सद् है और जो कर्म भगवान् को अर्पण कर दिया वह भी 'सद्' बन गया | कर्मार्पित जीव भी ब्रह्म रूप हो जाता है, इसमे अर्पण भक्ति आ गयी, वह सब ब्रह्म हो जाता है –

सोइ जानइ जेहि देहु जनाई ।
जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई ॥

(श्रीरामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड – १२७)

भगवान् 'शरणागत जनों' का पालन-पोषण करते हैं ।

भगवद्-रूप होने का एक ही लक्षण है, तदर्थ कर्म करो | तो हमने इसीलिए बताया कि नाम और नामी अभेद हैं इसलिए सृष्टि का मूल 'नाम' है |

बंदउँ नाम राम रघुवर को।
हेतु कृसानु भानु हिमकर को॥

(श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड – १९)

हम भगवान् के नाम की वन्दना करते हैं | जो **नाम** 'अग्नि, सूर्य, और चन्द्रमा' का कारण है | अनंत ऊर्जाएँ इसी भगवान् के नाम से निकलीं हैं | ऊर्जा सृष्टि रूप में है, जैसे कुम्हार घड़े को बनाता है, तो मिट्टी से घड़ा अलग होता है, उसको फिर "**विधि हरि हरमय**" ये निमित्त कारण बने, ब्रह्मा ने बनाया, विष्णु ने पालन किया, शिव ने संहार किया, ये सब भगवन्नाममय हैं, वेदों में लिखा है - ॐकार सब कुछ है | **"वेद प्राण सों"** भगवन्नाम ही वेद का प्राण है | इसलिए नाम से ही सृष्टि बनी, नाम से ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव में शक्ति आई | भगवन्नाम से ही सूर्य है, भगवन्नाम से ही अग्नि बनी, भगवन्नाम से ही चन्द्रमा है, ये सूर्य की ही ऊर्जा चन्द्रमा में परिवर्तित होती है, ऊर्जा का भौतिक रूप अग्नि है – "**ऊष्णास्पर्शवत् तेजः**" इसलिए अग्नि को पहले लिया गया | ऊर्जा सदा उष्ण होती है, तभी उसमें क्रिया होती है, नाम से ही अनंत सृष्टि पैदा हुई और नाम का ही सारा विकास है; ये जो व्यक्ति जानता है तो वही नाम की महिमा जानता है | जो नहीं जानते, वे हम जैसे मूर्ख लोग ही हैं | नाम की महिमा जानने वाले ब्रह्मा, शिव आदि भक्तजन हैं – **"महामंत्र सोई जपत महेसू |"** शिवजी सदा नाम की आराधना करते रहते हैं | 'चाहे शिव हों, चाहे ब्रह्मा हों, चाहे विष्णु हों' सभी नामाराधना करते हैं | इसीलिये "**विधि हरि हरमय** कहा गया है, ब्रह्मा, विष्णु, शिव कौन हैं? ये भीतर से तादात्मक हैं, और बाहर से प्रचुरात्मक हैं | ब्रह्मा के अंदर ब्रह्मत्व 'नाम' का है, हरि के अंदर हरित्व 'नाम' का है | शिव के अंदर शिवत्व 'नाम' का ही है | लेकिन जो इनके रूप अलग-अलग हैं – चार मुख के ब्रह्मा, चार भुजा के विष्णु, ये नाम का प्रचुरात्मक रूप है | नाम का तदात्मक रूप तो ब्रह्मत्व, शिवत्व, विष्णुत्व है | 'ब्रह्मा' नाम का प्रचुरात्मक रूप है, जैसे - चार भुजा, पाँच भुजा, इसलिए ये सब नाम का ही विकास है | ऊर्जा का रूप बदलता जाता है, जैसे बिजली से फ्रीज चला लेते हैं | वह ठंडा करता है, बर्फ बनाता है | ये ऊर्जा का विकास होता रहता है | ऊर्जा अनेक रूप धारण करती है, लेकिन उसका जो मूल रूप है, वह वही रहेगा | सृष्टि में विपरीत-विपरीत गुण आते हैं, जैसे - आकाश में स्पर्श नहीं था, उसका बेटा हुआ हवा, उसमें स्पर्श पैदा हुआ | हवा में रूप नहीं था, उसका बेटा हुआ तेज, उसमें रूप आ गया | विपरीत गुणों का विकास होता है | तेज में द्रवत्व नहीं था, उसका बेटा हुआ जल, उसमें द्रवत्व आ गया | जल में ठोसपन नहीं था, उसकी बेटी हुई पृथ्वी, उसमें ठोसपन आ गया | संसार परिवर्तन शील है, भगवान् ने कहा है कि सारी सृष्टि परिवर्तन शील है, केवल आत्मा में परिवर्तन नहीं होता है | प्रकृति हमेशा बदलती रहती है |

आशा जब मनुष्य भगवान् से इतर कहीं और करता है तो भगवान् से विमुख हो जाता है अर्थात् उसकी शरणागति नष्ट हो जाती है।

*** गौ-सेवकों की जिज्ञासा ***
श्रीमाताजी गौशाला का बैंक खाता दिया जा रहा है :-
SHRI MATAJI GAUSHALA
915010000494364

धाम में कैसे रहें ?

श्रीबाबामहाराज के सत्संग (धाम-महिमा ७/५/ २००६) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी गौरीजी, मानमंदिर, बरसाना

पूर्व प्रसंगानुसार ... जब ब्रजनिष्ठ भक्त श्रीवैष्णवजी ने बाबा महाराज से पूछा कि अनुपान क्या है? श्रीबाबा को 'वृन्दावनमहिमामृत' का श्लोक याद था, वही उन्होंने वैष्णव जी से कहा –

न कुरु न वद् किञ्चित् विस्मृताशेष दृश्यम्,
स्मर मिथुनमहस्तद् गौर नीलं स्मरार्तम् |
बहु जन समवायात् दूरमुद्विज्जयाहि,
प्रिय निवसतु दिव्य श्रील वृन्दावनेऽस्मिन् ||

हे भाई ! तुम यदि श्रील वृन्दावन में, ब्रजधाम में रहना चाहते हो तो केवल इसी तरह से यहाँ रहना, नहीं तो कुछ लाभ नहीं होगा | यहाँ रहते समय किसी से बातचीत नहीं करो और सब काम छोड़ दो अर्थात् बहिरंग व्यापार जितने भी हैं, वे सब छोड़ दो | यह खेल नहीं है | केवल शब्द से हमने सुन लिया | मन को किसी तरह से वहां ले चलो, जहाँ युगल सरकार प्रेम में भरकर क्रीड़ा कर रहे हैं | चाहे गा के, नाच के, बजाके कैसे भी | तीसरी बात जहाँ भीड़-भाड़ हो वहाँ मत बैठो, वहाँ किसी की बात मत सुनो | यह सबसे बड़ा जहर होता है | इस विषय में श्री बाबा महाराज बहुधा अपना संस्मरण सुनाते हैं कि ग्वारिया बाबा के शिष्य श्री जी मन्दिर के गोस्वामी किशोरी लाल जी ने एक बार उनसे कहा था- बेटा, कभी साधु संग नहीं करना | श्री बाबा ने कहा – महाराज ! ये तो आप नई बात कह रहे हैं | साधु संग की महिमा का वर्णन तो सभी वेद-शास्त्र, पुराणादि किया करते हैं | गोस्वामी जी ने भी कहा है- **प्रथम भगति संतन्ह कर संगा |**

दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ||

(श्रीरामचरितमानस, अरण्यकाण्ड- ३५)

किशोरी लाल गोस्वामी बोले- ये सब पोथी-पन्ना की बाते हैं | मैं यह बता रहा हूँ, मैं भी तो श्री जी मन्दिर का गोसांई हूँ | मेरी बात मानना और साधु संग मत करना | श्री बाबा ने पूछा कि इसका कारण क्या है? तो गोस्वामी जी ने कहा कि इसका कारण यही है कि वर्तमानकालीन साधु संग में तुम्हें कहीं भी कृष्ण चर्चा नहीं मिलेगी | भागवत में भी यही लिखा है- कोई बड़ा ऊँचा तपस्वी है, बड़ा ऊँचा ज्ञानी है, लेकिन कृष्ण चर्चा यदि नहीं है तो वह कुछ नही है | न वह साधु है, न विरक्त है, न कुछ है | जड़ भरत जी ने कहा-

रहूगणैतत्तपसा न याति न चेज्यया निर्वपणाद् गृहाद्वा |
नच्छन्दसा नैव जलाग्निसूर्यैर्विना महत्पादरजोऽभिषेकम् ||

(श्रीमद्भागवतजी ५/१२/१२)

भक्त कौन है? –

यत्रोत्तमश्लोकगुणानुवादः प्रस्तूयते ग्राम्यकथाविघातः |
निषेव्यमाणोऽनुदिनं मुमुक्षोर्मतिं सतीं यच्छति वासुदेवे ||

(श्रीमद्भागवतजी ५/१२/१३)

जहाँ हर समय भगवान् का गुणगान है और यदि यह नहीं है तो सब कुछ बेकार है | वैराग्य बेकार है, साधुता बेकार है | प्रथम स्कंध में भी कहा गया है –

इदं हि पुंसस्तपसः श्रुतस्य वा
स्विष्टस्य सूक्तस्य च बुद्धिदत्तयोः |
अविच्युतोऽर्थःकविभिर्निरूपितो
यदुत्तमश्लोकगुणानुवर्णनम् ||

(श्रीमद्भागवतजी १/५/२२)

सबसे पहले भागवत में यही बात कही गयी कि कोई बहुत बड़े तपस्वी हैं, तपस्वीजी के पास कोई जाकर बैठा तो वे लगे डाँटने- ए दुनिया, भाग यहाँ से | कोई कृष्ण चर्चा

उनके पास नहीं है केवल दुनिया ही दुनिया लगा रखा है तो फिर किस बात के तपस्वी हैं | कोई बहुत बड़े वेदज्ञ हैं, विख्यात विद्वान् हैं | उनके पास गए और कोई कृष्ण चर्चा नहीं है तो क्या फायदा रहा? कहीं बहुत बड़ा भंडारा हो रहा है, खूब रबड़ी-पूड़ी की पंगत हो रही है परन्तु यदि वहाँ कृष्ण चर्चा, कृष्ण कीर्तन नहीं है तो उससे क्या लाभ है ? कहीं वैदिक सूक्तों का खूब पाठ हो रहा है किन्तु कृष्ण चर्चा यदि नहीं है तो क्या फायदा ? कहीं बहुत ज्ञान चर्चा हो रही है, बहुत दान हो रहा है किन्तु सच्चा अर्थ है उत्तम श्लोक भगवान् का वर्णन | इसलिए उसके बिना सब साधन असाधन हो गये | श्रीबाबा महाराज ने जब साधुओं के पास जाकर देखा तो कहीं भी उन्हें कृष्ण चर्चा नहीं मिली तो उन्हें किशोरीलाल गोस्वामी जी की बात सत्य लगी और उन्होंने सोच लिया कि अब कहीं मत जाओ, जहाँ भी जाओगे, वहां भगवत्चर्चा के स्थान पर परनिंदा ही मिलेगी, केवल अनात्म चर्चा ही मिलेगी | इससे अभाव उत्पन्न होता है, भाव सरणी नष्ट हो जाती है | चित्त में राग-द्वेष का संक्रमण हो जाता है | एक तो वैसे ही किसी में भाव नहीं है और अभाव की बात सुनने से जो कुछ भी उसमें भाव रूपी लता थी, वह भी जल जाती है | शास्त्रों में साधु संग करने के लिए कहा गया है तो क्यों कहा गया है ? रामायण में भगवान् राम ने शबरी से कहा-

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा ।

दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ॥

(श्रीरामचरितमानस, अरण्यकाण्ड- ३५)

कथा प्रसंग के कारण ही तो भगवान् में रति होगी और जहाँ भगवत्कथा ही नहीं है केवल व्यथा ही व्यथा है, अनात्म राग-द्वेषात्मक चर्चा है, वहां तो केवल विनाश ही विनाश है | इसीलिए धाम में रहने की पद्धति यही है कि अन्य जितनी भी चर्चायें हैं, उनसे दूर रहना चाहिए | इसीलिए श्रीबाबा महाराज ने यात्रा में आये उन वैष्णव महानुभाव से यही कहा कि जब तक धामवास करते हुए हम अन्य चर्चायें सुनेंगे तो धाम के प्रति हमारा दिव्य भाव जागृत नहीं होगा | किसी सम्प्रदायविशेष की उस ब्रजयात्रा में बहुत सी दुकानें थी, लोग सामान खरीदने में और अन्य चर्चाओं में लगे रहते थे, रसोई के कार्य में व्यस्त रहते थे | श्रीबाबा महाराज ने कहा कि आप तैंतीस ब्रजयात्रायें तो कर चुके हैं अगर यदि आप निरंतर कृष्ण भावना और कृष्ण नाम से जुड़े रहते तो अवश्य आपका रस बढ़ता, न बढ़ता तो कम से कम रस घटने की हालत तो न होती जो आप ऐसा कह रहे हैं कि अब मुझे ब्रजयात्रा में पहले जैसा आनन्द नहीं आता | वे सच्चे वैष्णव थे इसलिए श्री बाबा महाराज की बात मान गये | उन्होंने कहा कि जब हम यात्रा में अपने तम्बू के बाहर जाते हैं तो दुकानदारों की आवाजें सुनाई पड़ती हैं- ये ले लो, वो ले लो, लोगों का सांसारिक व्यवहार दिखाई पड़ता है | आप ठीक कहते हैं इसीलिए हृदयगत भावों में वृद्धि के स्थान पर ह्रास होने लगा है | उसी घटना के बाद से यह बात श्री बाबा के दिमाग में जम गयी थी, इसलिए जब उन्होंने मानमंदिर से प्रथम बार श्री राधारानी ब्रजयात्रा का श्री गणेश किया तो उन्होंने अन्य सहयोगी भक्तों के साथ संकल्प किया कि हम कुछ नहीं करें तो निरंतर कीर्तन तो कर ही सकते हैं | इस संकल्प के साथ यात्रा में निरन्तर अखंड कीर्तन की व्यवस्था की गयी | यात्रा में अखंड कीर्तन का यह परिणाम रहा कि यात्रा नीरस नहीं रही और उसमे रस बढ़ता गया | रस में वृद्धि हुई और यात्रा में सम्मिलित होने वाले श्रद्धालु भक्तों की संख्या में भी उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई, यद्यपि इस यात्रा के लिए आज तक कोई प्रचार नहीं किया गया | यात्रा में श्रीबाबा द्वारा यही मुख्य व्यवस्था की गयी कि ब्रजयात्री प्रतिक्षण भगवन्नाम से जुड़े रहें | इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु ऐसे ध्वनि विस्तारक यंत्रों (sound system) की, ऐसी रसमयी युगलमन्त्र के कीर्तन की धुनों की रचना की गयी कि उसके कारण चालीस दिवसीय यात्रा का प्रत्येक क्षण ब्रजवासियों और ब्रजयात्रियों को दिव्य ब्रजरस की

अनुभूति कराता रहता है | लोगों को परास्त कर देने वाली थकान का अनुभव नही होता और यात्रा समाप्ति के बाद वे पत्र और फोन द्वारा सूचित करते हैं कि हमको सदा ही यात्रा के कीर्तन का स्वप्न में भी अनुभव होता रहता है| आज भी श्री राधारानी ब्रजयात्रा के अंतिम दिन विदाई के समय अपने घर जाते समय ब्रजयात्री इस प्रकार आलिंगनबद्ध होकर रोते हैं कि ऐसा लगता है जैसे बेटी की विदाई हो रही हो | इससे पता पड़ता है कि धाम में इसी विधि से प्रतिपल युगल सरकार के नाम,रूप,गुण व लीला के श्रवण-कीर्तन से युक्त होकर रहना चाहिए, यह उसका अनुपान है | धाम में इस तरह रहिये जैसा कि रसिक संतो ने कहा है –

नैन न मूँदे ध्यान को अंग न कीन्हें न्यास | हरिराम व्यास जी महाराज का यह अनुभव है कि मैने ब्रज में आकर कभी ध्यान नहीं लगाया | ध्यान में भी बड़ा जोर पड़ता है, आँखें बंद करो, मन एकाग्र करो | अनुष्ठान में अंगन्यास, करन्यास करना पड़ता है | व्यास जी कहते हैं कि ये सब भी मैने नही किया | धाम में व्यासजी ने कैसे निवास किया, ये भी जानना चाहिए | नाच गाय रासहिं मिले, कर वृन्दावन वास || यह नाचना-गाना क्या है? यह सरस साधन है | ब्रज के हर मन्दिर में समाज(पद गान) होता है | नन्दगाँव में, बरसाना में, वृन्दावन में राधावल्लभ जी के मन्दिर में, टटिया स्थान में, सभी जगह समाज गायन होता है |

संसार से आशा रखना ही दुःख का कारण

दत्तात्रेय जी ने एक पिंगला नाम की वेश्या को गुरु बनाया। वह वेश्या रात भर जागती रही कि अब हमारा प्रेमी आयेगा। दत्तात्रेय जी अवधूत (महान विरक्त) थे, एक बार वह घूमते हुए उसके बगीचे में आकर रुक गये। पिंगला अपने समय की बड़ी प्रसिद्ध वेश्या थी। उस बगीचे में सामने ही उसकी कोठी थी, वह रात भर खिड़की पर आती थी कि अभी हमारा प्रेमी आया है कि नहीं और देखकर लौट जाती थी, लेट जाती थी। कोई आने वाला नहीं आया, बहुत रात तक वह जागती रही। एक क्षण भी नहीं सोयी, जब सबेरा सा हो गया, उसने जान लिया अब कोई नहीं आयेगा तो गई और पलंग पर गिरकर सो गयी। दत्तात्रेय जी यह सब देख रहे थे तो उन्होंने शिक्षा ली कि संसार में सबसे बड़ा दुःख है 'आशा'।

आशा हि परमं दुःखं नैराश्यं परमं सुखम् ।
यथा सञ्छिद्य कान्ताशां सुखं सुष्वाप पिङ्गला ॥

(भा. ११/८/४४)

आशा ही सबसे बड़ा दुःख है अर्थात् इससे बड़ा दुःख न था, न है और न होगा। सबसे बड़ा सुख क्या है? निराशा। सुख के साथ भी 'परम' शब्द का प्रयोग किया और दुःख के साथ भी 'परम' शब्द का प्रयोग किया। संसार का सबसे बड़ा दुःख है 'आशा' और सबसे बड़ा सुख है 'निराशा'। पिंगला ने जब अपने पास आने वाले प्रेमी की आशा का त्याग किया, तब उसे सुख मिला और जाकर के सो गई।

प्रीति-रीति 'सेवाराधन'

श्रीबाबा महाराज के सत्संग 'श्रीराधासुधानिधि' (४/५/१९९८) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी सुगीताजी, मानमंदिर, बरसाना

किस प्रकार श्यामसुन्दर श्री जी के वसनांचल (ओढ़नी) के द्वारा कृतार्थ होते हैं, उसी भाव के एक पद में वर्णन आता है कि बहुत चतुर सखियों के बीच में किशोरी जी आ रही हैं | उनका ध्यान धरो | बड़ी सुंदर छवि है, गौर वर्ण है | गौर वर्ण पर नील शाटिका बड़ी सुन्दर लग रही है | ऊपर से नीचे तक दिव्य आभूषण हैं | नासिका में नथ, कर्ण में कर्णफूल, बेंदी, शीशफूल, कंकण इत्यादि शब्द करते हुए, चरणों में नूपुर बजते हुए चले आ रहे हैं | चतुर सखियों के बीच में, परम चतुरा राधा रानी आ रही हैं –

सखियन बीच लाड़ली आवै || लाड़ली आवै राधा आवै, सखियन बीच.....

छवि निरखत रीझे नंदनन्दन, प्यारी मनहिं रिझावै || सखियन बीच.....

श्यामसुन्दर राधिका रानी को रिझाना चाहते हैं | कैसे करें? कभी आगे जाते हैं, कभी पीछे जाते हैं, ये बड़ी विचित्र प्रेम की गति है | सोचते हैं कौन सा हाव-भाव प्रदर्शित करें जिससे इनका मन खिंचे?

कबहुक आगे कबहुक पाछे, नाना भाव बतावै-बतावै | सखियन बीच .....

अनेक भाव दिखा रहे हैं | कभी त्रिभंगी गति से खड़े होते हैं, कभी किसी कदम्ब की डाल को पकड़ लेते हैं, कभी किसी डाल के ऊपर अपनी भुजा टेककर तिरछे खड़े हो जाते हैं, कभी अपनी वनमाला उतारकर आकाश में घुमाते हैं | ये सब अनेक-अनेक भाव दिखाते हैं | इसी को विभ्रम कहते हैं | राधिका रानी घूँघट में से कभी-कभी देख लेती हैं और समझ गयीं कि ये मेरे चित्त को चुराने की कोशिश कर रहे हैं |

राधा यह अनुमान कियो हरि, मेरे चितहिं चुरावै-चुरावै | सखियन बीच .....

जब मनमोहन ने देखा कि श्री लाड़ली जी पूरी कृपा नहीं कर रही हैं तो सबसे बड़ी बात होती है सेवा | किसी को वश में करना है तो उसकी सेवा करो | सेवा से शत्रु भी वश में हो जाता है | ये प्रेम की परिपाटी है, जो सेवा नही जानता है, उसके अंदर किसी भी युग में कभी भी प्रेम नहीं आयेगा | श्रीमद्भागवत में यही बात कही गयी है | वहाँ कहते हैं कि कितना भी मनुष्य साधन कर ले | मनुष्य साधन मन शुद्ध करने के लिए ही करते हैं परन्तु मन शुद्ध नहीं होता | इसीलिए भागवत में शुकदेवजी कहते हैं –

तैस्तान्यघानि पूयन्ते तपोदानजपादिभिः ।
नाधर्मजं तद्धृदयं तदपीशाङ्घ्रिसेवया ॥

(श्रीभागवतजी ६/२/१७)

लोग बहुत तपस्या करते हैं, बहुत दान देते हैं, बहुत जप करते हैं परन्तु हृदय शुद्ध नहीं होता है क्योंकि उनके अंदर सेवा भाव उत्पन्न नहीं होता | देखा जाये तो तपादि करने वालों के मन में चोरी रहती है कि हम अपना कल्याण करें, अपना स्वार्थ छुपा रहता है | दानादि जितने भी कर्म हैं, इन सबके पीछे स्वार्थ छिपा रहता है कि हम अपना कल्याण करें | इसलिए हृदय विशाल नहीं बनता, कभी नहीं बनता है | अधर्म, स्वार्थ, वासनाओं से भरा यह हृदय इन साधनों से पवित्र नहीं होता | वह तो केवल सेवा से ही पवित्र होता है | जब तुम सेवा करोगे, दूसरे को सुख दोगे, दूसरे का कल्याण चाहोगे, दूसरे का भला करोगे, उससे बहुत जल्दी हृदय शुद्ध हो जाता है, विशाल बनता है और इसी को प्रेम कहते हैं | प्रेम करना सबको नहीं आता | संसार में स्वार्थी लोग हैं, अपना काम बनाया और चल दिये | सच्चा प्रेम तो सेवा से होता है | श्री कृष्ण को देखो कि यद्यपि सकल ब्रह्मांड के नायक हैं,

प्रीति की रीति रंगीलो ही जानें |
यद्यपि सकल लोक चूड़ामणि, दीन अपन को माने ||

यद्यपि सकल लोक चूड़ामणि हैं परन्तु दीन बनकर सेवा करते हैं | श्रीकृष्ण ने सेवा आरम्भ किया, बड़ी सुंदर सेवा करने लग गये | पहले तो चारों तरफ घूमते रहे फिर

उन्होंने सोचा कि श्रीजी ऐसे नहीं प्रसन्न होंगी इसलिए बहुत आगे चले गये और अपनी सोने की लकुट लेकर के जो रास्ते में कंकड़-पत्थर आदि पड़े थे, उन सबको हटा रहे हैं | अपनी लकुट को जैसे बेलना सरकाते हैं वैसे ही धरती पर सरकाकर देख रहे हैं कि क्या इससे मार्ग मृदु होता है, श्री जी के चरण पड़ेंगे तो ऐसा तो नहीं कि कोई कंकण पड़ा हो या रास्ता ऊँचा हो | जैसे बेलना से रोटी को संवारा जाता है कि कहीं मोटी या ऊँची न रह जाये, लम्बी न हो जाये, चौड़ी न हो जाये वैसे ही ठाकुर जी लकुट लेकर के रास्ते को संवार रहे हैं | बड़ी चतुराई और बड़ी कला से संवार रहे हैं, ये अद्भुत सेवा ठाकुर जी ने प्रिया जी को प्रसन्न करने के लिए प्रारम्भ की |

आगे जाय कनक लकुटे ले, पन्थ संवार बतावें-बतावें |
सखियन बीच .....

श्री नन्दलाल के हाथ में सोने की बहुत सुंदर लकुट है | पन्थ संवारने के बाद इशारे में श्रीजी से प्रार्थना कर रहे हैं कि इधर चरण रखिए | सेवा से तो मेवा मिलती ही है | सच्ची प्रीति सेवा से ही होती है | जैसे आपने देखा होगा कि बड़े-बड़े लोग पधारते हैं तो उनके स्वागतकर्ता कहते हैं - जय-जय, इधर से पधारिये, इधर से आइये | प्रेम चाहिए तो सेवा करना सीखो, किसी भी साधन से तुम्हारा हृदय पवित्र नहीं हो सकता, तुम प्रेमी नहीं बन सकते | स्वार्थी भले ही बन जाओगे | महान् तपस्वी बन जाओगे परन्तु प्रेमी नहीं बन सकते | उसके लिए सेवा आवश्यक है | जब श्री जी आगे चलती हैं तो जहाँ-जहाँ उनकी परछाईं पड़ रही है, उस परछाईं पर श्यामसुन्दर अपना मुकुट छुवाते हैं, अपनी आधीनता दिखाते हैं |

निरखत छाँय जहाँ प्यारी की, तहाँ लै छा छुआवे-छुआवे |
सखियन बीच .....

सेवा से धीरे-धीरे श्यामसुन्दर की प्रसन्नता बढ़ रही है | लीला का बड़ा सुंदर क्रम है | पहले श्यामसुंदर ने बहुत प्रयत्न किया, आगे गये, पीछे गये, त्रिभंगी गति से खड़े भये, तब तक श्री जी ने कुछ नहीं किया | जब मार्ग को झाड़ करके सेवा किया कि श्रीजी के चरणों को कष्ट न हो, श्री जी जब चलीं उस पर, उसके बाद श्यामसुंदर ने आधीनता दिखाई | इस सेवा को देखकर के श्री जी प्रसन्न भयीं | श्यामसुन्दर ने अपना एक नया भाव दिखाया, **अपने सिर पीताम्बर बारत** एक बड़ा विचित्र भाव है, अपने सिर पर पीताम्बर वारते हैं, क्यों, इसका कारण यह है कि नायिका में दो गति होती है एक लज्जा और दूसरी वामा | वामा कहते हैं कि जब नायिका मिलन के लिए सदा मना करती है | यदि ऐसी स्थिति में श्यामसुन्दर अपना पीताम्बर जाकर के श्री जी पर न्यौछावर करेंगे तो श्री जी नाराज हो जायेंगी अर्थात् वामा गति में आकर भौंहें टेढ़ी कर लेंगी | उनको रिझाना है इसलिए मोहन अपना पीताम्बर अपने ही सिर पर वार रहे हैं | इसका बड़ा गंभीर भाव है | वह क्या ? इसका भाव यह है कि हे गौरांगी ! आपकी जो पीत आभा है, वह हमारे सिर पर है | लोग कहते हैं कि कारी कामर पर रंग नहीं चढ़ता है लेकिन नहीं | बहुत से लोग कहते हैं कि कन्हैया कारे हैं, कारे में गोरे का रंग कैसे चढ़ जायेगा | यह बात नहीं है, बरसाने में यही होता है | यहाँ आने पर श्याम का कालापन भी चला जाता है | गौड़ेश्वर सम्प्रदाय में राधा रसमंजरी नामक एक ग्रन्थ है, उसमे लिखा है – धन्य है यह भूमि, जहाँ श्री राधिका रानी का गौर तेज इस तरह से चमकता है कि जब राधिका रानी वन में आती हैं तो – भौराकुरंग कोकिलगणः..... उस समय काले रंग के भौंरे, (भौंरे कोयला से भी ज्यादा काले होते हैं) कोयल, काला हिरन आदि भी उनकी गौर कान्ति के कारण गोरे लगने लग जाते हैं | काले हिरन भी सुनहली कान्ति में चमचमाते हुए गोरे लगने लग जाते हैं | कोयल पर जब श्री जी की छाया पड़ती है तो गोरी हो जाती है | ऐसा गौर तेज है | तोता मैना भी राधिका रानी के प्रभाव से गोरे हो जाते हैं | तमाल वन में सैकड़ों तमाल के वृक्ष खड़े हैं, नीली कान्ति फैला रहे हैं | जब श्री राधिका रानी प्रवेश करती हैं तो सब तमाल के वृक्ष पीले चमकने लग जाते हैं, ऐसा गौर तेज है | जितने फूल हैं, वे सब गौर हो जाते हैं | यहाँ तक कि चकवा-चकई, कपोत (कई प्रकार के रंग के कपोत होते हैं), मोर आदि पक्षी भी गोरे हो जाते हैं | सारा वृन्दावन गोरा हो जाता है, बोले, एक आश्चर्य की बात और सुनो | क्या ? राधिका रानी की अद्भुत कान्ति से श्याम भी गौर हो जाते हैं | इसी बात को सबसे पहले राधिका रानी की स्तुति में प्रसिद्ध कवि बिहारीजी कहते हैं | जब वह दोहा बनाने लग गये तो सोचा कि युगल सरकार की

उपासना है तो दोनों की स्तुति होनी चाहिए | अब क्या करें? तो पहले दोहे में वह लिखते हैं –

मेरी भवबाधा हरो, राधा नागरि सोय | जाके तन छाईं परत, श्याम हरित दुति होय ||

इस दोहे का अर्थ है कि वे राधा रानी मेरी बाधा को हरें, जिनकी परछाईं पड़ते ही श्यामसुन्दर नीले से हरे हो जाते हैं | नीले में पीला मिला दो तो हरा रंग बन जाता है | इस दोहे में दोनों (राधा-माधव) की स्तुति हो गयी परन्तु विशेषता राधिका रानी की कान्ति की दिखाई कि अद्भुत बात है जहाँ कि श्रीकृष्ण भी आकर के गोरे बन जाते हैं | उन राधिका रानी की हम स्तुति करते हैं | किसी ने कहा कि अरे भाई, ये तो तुमने राधिका रानी का पक्ष ले लिया | कवि ने कहा - नहीं, तुम्हारी बुद्धि गलत चल रही है जैसे किसी को लस्सी पिलाई तो वह कहेगा कि भाई मन हरा हो गया तो वैसे ही ठाकुर जी भी हरे हो गये तो इसमें प्रसन्नता तो श्री कृष्ण की हुई | तो अब हमारी-तुम्हारी बाधा कैसे हरें? तो मेरी भवबाधा हरो, राधा नागरि सोय | जाके तन छायीं पड़त, श्याम हरित दुति होय || राधा नागरी हमारी भवबाधा हरें | भव बाधा किसकी? भवबाधा हमारी-तुम्हारी | कैसे हरेंगी? जिनकी कान्ति से हमारा-तुम्हारा कालापन जो पाप है, हरित दुति- वह क्षीण हो जायेगा, सब कालापन मिट जाएगा | पापों का पहाड़ राधिका रानी की कृपा से जल जाता है |`वह राधारानी हमारे ऊपर कृपा करें | वही बात यहाँ है, ये सब भाव, अनुभाव, विभ्रम, ललित आदि बहुत सी प्रेम शास्त्र की बातें हैं | श्यामसुन्दर अपने ही पीताम्बर को अपने ऊपर घुमा रहे हैं | क्यों घुमा रहे हैं? इस भाव से घुमा रहे हैं कि हे श्री जी ! आपकी गौर कान्ति हमारे सिर पर है |

अपने सिर पीताम्बर बारत, ऐसे रूचि उपजावे-उपजावे || सखियन बीच .....

अपनी रूचि श्यामसुन्दर दिखा रहे हैं कि रंग है तो संसार में एक पीला ही रंग है और सब तो बदरंग हैं | अपनी रूचि दिखा रहे हैं कि आपकी पीत कान्ति हमारे माथे पर है | अब राधारानी उत्तर दे रही हैं | जिस उत्तर को पाकर के श्रीकृष्ण धन्य हो गये, यही राधा सुधानिधि का पहला श्लोक है | श्रीजी ने क्या उत्तर दिया? वही जो ग्रन्थकार ने कहा –

यस्याः कदापि वसनांचल खेलनोत्थ,
धन्यातिधन्य पवनेन कृतार्थमानी ।
योगीन्द्र दुर्गमगतिर्मधुसूदनोऽपि,
तस्याः नमोस्तु वृषभानुभुवो दिशेऽपि ॥

(श्रीराधासुधानिधि-१)

अपनी ओढ़नी उठाकर श्रीजी ने भाव दिखाया | श्रीजी की ओढ़नी नील वर्ण या हरित वर्ण की थी, इतनी सेवा के बाद जब ओढ़नी दिखाई पड़ी तो क्यों न अपने-आप को श्रीकृष्ण धन्य मानेंगे | कितनी बड़ी सेवा किया श्यामसुन्दर ने, कितनी बड़ी तपस्या किया | मार्ग झाड़ा और मार्ग झाड़ने के बाद उस पर फूल बिछाये, फूल बिछाने के बाद अपना पीताम्बर दिखाया कि आपकी पीत कान्ति हमारे सिर पर है | इसके बाद श्रीजी ने भाव दिखाया | बस इस धन्यता को प्राप्त करके श्रीकृष्ण का साहस हुआ और वह श्री जी के पास जाने लग गये | ओढ़ ओढ़निया चलत दिखावत, यही मिस निकटहिं आवे-आवे | सखियन बीच ..... ऐसे मन भावन जो श्रीकृष्ण हैं, जो ऐसे प्रेमी हैं, सेवा परायण हैं, उन पर श्रीजी ओढ़नी दिखा करके रीझ रही हैं |

'सूरश्याम' ऐसे भावनि सों, राधा मनहिं रिझावे-रिझावे ||
सखियन बीच लाड़ली ..... ओढ़नी के विषय में ये सूरदास जी का अनुभव था | जो ये राधासुधानिधिकार ने लिखा है कि उस वसनांचल की हवा से ही श्रीकृष्ण धन्य हुये तो यहाँ इस लीला से यह बात समझ में आती है कि कितने साधन के बाद, कितनी सेवा के बाद ओढ़नी का भाव श्रीकृष्ण को प्राप्त हुआ | कितनी सेवा किया, मार्ग साफ़ किया, पुष्प बिछाए | देखो ! जो जिसका जितना महत्व जानता है, वह उतनी ही सेवा करता है |

इस देहासक्ति, इन्द्रियासक्ति का छूटना बड़ी मुश्किल बात है। भगवान् ही हमारी गेहरति को काटते हैं।

निष्कपटता भगवान् को अतिप्रिय

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'गोपी-गीत'(३/११/१९९५) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी हेमाजी, मानमंदिर, बरसाना

शुद्ध स्मृति कैसे जागे ? वह स्मृति जगनी चाहिए क्योंकि कर्मों का उद्बोध वातावरण पाकर के होता है | जैसा वातावरण और जैसा संग प्राप्त होता है, वैसे ही विचार बना करते हैं | इनका आपस में संबंध है इसीलिए पृथु जी ने भगवान् से कहा - महाराज ! राजपाट तो मुझको कुछ नहीं चाहिए, स्वर्गलोक का इन्द्रासन भी मुझे नहीं चाहिए, जो हमारी **स्मृति** 'राख के पहाड़' के नीचे दब गयी है, उसे जगाने का एक ही रास्ता है कि संतों के पास सामने बैठ करके भगवद्-कथा सुनी जाय, उस समय उनके मुँह से जो हवा निकलती है, चूंकि उनके हृदय में भगवान् विराजित हैं तो उस हवा के साथ भगवान् के चरणकमल में जो अमृत है, उस अमृत की कणिका बाहर निकलती है | अब आप इसे इस प्रकार समझो जैसे कि आप लहसुन खाओ तो आपके मुँह से जो हवा निकलेगी, वह लहसुन के कणों को लेकरके निकलेगी, उसी तरह से हृदय में जिसके भगवान् हैं, उसके मुख से जो हवा निकलती है वह भगवान् के चरणकमलों में स्थित अमृत की कणिका को लेकर निकलती है |

न कामये नाथ तदप्यहं क्वचिन्न यत्र युष्मच्चरणाम्बुजासवः ।
महत्तमान्तर्हृदयान्मुखच्युतो विधत्स्व कर्णायुतमेष मे वरः ॥

(श्रीमद्भागवतजी ४/२०/२४)

इसीलिए पृथु जी ने भगवान् से कहा- हे परम शक्तिमान प्रभो ! मुक्ति की मैं इच्छा नहीं करता | जहाँ पर आपके चरणकमलों का रस नहीं है, उस मुक्ति को लेकर मैं क्या करूँगा ? मुक्ति से ऊँची चीज वह भगवान् के चरण कमलों के रस का कण यदि मुक्ति में भी नहीं है तो वह किस बाजार में, किस दुकान पर मिलता है तो पृथुजी ने कहा - महापुरुषों के हृदय से जो हवा निकली, मुख में आई और फिर बाहर गयी तो वे जो कथा कहते हैं, भगवत्कीर्तन करते हैं तब उनके मुख से भगवान् के चरणकमलों में स्थित अमृत का कण निकलता है, इसलिए मैं यह वरदान मांगता हूँ कि दस हजार कान मुझको दे दीजिये | दस हजार कान वह क्यों मांगते हैं ? दस हजार कान रहेंगे तो बहुत जगह से कथामृत ले लो, सब जगह से भगवान् का कथामृत भीतर घुसेगा | वह रसामृत कान के द्वारा ही भीतर प्रवेश करेगा और दस हजार कान रहेंगे तो बहुत लाभ होगा | दस हजार कान से तुमने कथा सुना तो लाभ ये होगा कि महापुरुषों के मुख से जब कथा-कीर्तन होगा तो उसके माध्यम से भगवान् के चरणकमल के अमृत के कण को लेकर के हवा निकलती है | उससे यह परम लाभ होता है कि जो स्मृति हमारी ढक चुकी है, हजार नहीं, लाख नहीं, करोड़ नहीं, अगणित युगों से हमारी स्मृति नष्ट हो चुकी है कि हम कृष्णदास हैं, उस ध्रुवा स्मृति की प्राप्ति होती है | वर्तमान में तो केवल यही याद आता है कि हम लड्डूदास हैं, पेड़ादास हैं, ये बहू के दास हैं, ये बेटा के दास हैं, ये पैसा के दास हैं, ये भोग दास हैं | इनको कढ़ी-पकौड़ी अच्छी लगती है तो ये कढ़ी-पकौड़ीदास हैं | ये सब जितनी विकृतियाँ जब हट जाती हैं और केवल एक ही बात की स्मृति रहती है कि हम कृष्णदास हैं और वह जो स्मृति है, वह सांसारिक संस्कारों के चक्कर में ढकी हुई है, राख के पहाड़ में वह आग छिपी हुई है | वह स्मृति जब जागती है अर्थात् शुद्ध संस्कार जब जागते हैं तो उनसे अपने आप सब

अमृत पियो, अमृत क्या है? भगवान् का गुणगान।

काम हो जाता है | इसीलिए संस्कारों को जगाने के लिए, सच्ची स्मृति देने के लिए ही महापुरुषों का सत्संग किया जाता है और इसका अन्य कोई प्रयोजन नहीं है | पृथु जी बोले कि इसके अतिरिक्त मुझको और कोई वरदान चाहिए ही नहीं | अब आप देख लो कि परीक्षितजी द्वारा शुकदेव जी के ही मुख से भागवत सुनी गयी जबकि उस सभा में और भी बहुत से महर्षि थे | वस्तुतः जो विशुद्ध संत, वीतराग महापुरुष होते हैं, उनकी कथा, उनकी वाणी, उनका कीर्तन साधारण जीवों से अलग होता है, उसमें एक अलग शक्ति होती है, जिसको बहुत कृपा वाला व्यक्ति ही समझ सकता है, सब नहीं समझ सकते क्योंकि सबमें समझने की बुद्धि भी नहीं है | मलिन बुद्धि के व्यक्ति नहीं समझ पाते | अनन्त संस्कार हमारे चित्त में लिखे हुए हैं | एक छोटे से रजिस्टर में जैसे दस हजार पन्ने लिख दिए जायें, एक लाख पन्ने कोई लिख दे तो उसी तरह से चित्त के भीतर अनंत कर्म लिखे हुए हैं | एक लाख वर्ष पहले हम लोग संध्या के साढ़े पांच बजे क्या कर रहे थे, वह भी चित्त में लिखा हुआ है, दस करोड़ वर्ष पहले हमलोग सबेरे बैठ करके क्या कर रहे थे, ये भी लिखा हुआ है | अरब नहीं, खरब नहीं, ब्रह्मा के सैकड़ों कल्प पहले हमलोगों ने किस दुकान में बैठ के पकौड़ी खाई थी, ये भी चित्त में लिखा हुआ है | वहाँ हर चीज लिखी हुई है, इसीलिए उन कर्मों को, जो चित्त के भीतर संस्कार बनके दबे हुए हैं, गोपियाँ कहती हैं कि उनको कृष्ण खींचते हैं | कृष्ण माने कर्षण, जो चीज दब गयी है, उसे खींच करके, निकाल करके, उसको कृष्ण नष्ट कर देते हैं | अरे ! हम-तुम लोग तो पाप को भीतर से निकाल भी नहीं सकते और देखो, हर आदमी अपने पापों को छिपाता है, उनको दबाता है जैसे हमलोग सोना-चांदी का क्या करते हैं, उन्हें धरती के भीतर छुपायेंगे अथवा तिजोरी के भीतर रखकर ताला लगा देते हैं वैसे ही हर आदमी अपने दुष्कर्मों को गाड़ता है, छिपाता है, छोटे से बच्चे से भी अगर जोर से पूछो कि ये लोटा किसने गिराया तो गिराया तो उसने होगा लेकिन कहेगा मैंने नहीं गिराया था | अतः जीव अपने हर कर्म को ढकता है और इतना ढकता है कि ढकने के कारण वह कर्म अमिट हो जाता है जबकि कर्म तो कहने से नष्ट होता है | इसलिए जो हमारे अनंत पापकर्म हैं, वे सब दबे हुए हैं जैसे हमलोगों ने सबसे छिपा करके धरती के भीतर मिट्टी में सोना-चांदी गाड़ दिया वैसे ही हमारे हर कर्म दबे हुए हैं, बहुत गहराई में हैं क्योंकि हर जीव का यह स्वभाव है | हर जीव की आदत है कि वह अपने कर्मों को छिपाता है | ऐसा कौन है जो कह दे कि हाँ, मुझसे इस प्रकार से गलत कर्म होते हैं, ऐसे तो महापुरुष ही होते हैं जैसे सूरदास जी कहते हैं – **"मो सम कौन कुटिल खल कामी |"** सारे संसार के सामने सूरदास जी निर्भीकता से कहते हैं कि मैं कामी हूँ, मैं क्रोधी हूँ | ऐसे तो केवल महापुरुष लोग ही होते हैं, उनके अन्दर बहादुरी होती है, उनका हृदय निर्मल होता है, अंतःकरण शुद्ध होता है, उनके अन्दर छिपाव नहीं होता | एक जगह परिभाषा लिखी है संत की और असंत की, संत की पहचान क्या है? **"मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं सदात्मनाम् |"** संत का लक्षण यह है कि जो उनके मन में है, वही बात वाणी में है और वही क्रिया में है | जो पवित्रता मन में है, वही पवित्रता वाणी में है और वही कर्म में भी है, दिन रात उनके साथ रहकर के देख लो | जिनके भीतर काम नहीं, क्रोध नहीं, मोह नहीं, लोभ नहीं, वह संत है और दुष्ट का लक्षण ये है कि मन में कुछ और, वाणी में कुछ और तथा कर्म में कुछ और | दुष्ट का यह लक्षण है कि किसी के घर गया, मन में तो खाने की इच्छा है, मेजबान ने कहा कि भोजन कर लीजिये तो दुष्ट कहेगा - नहीं-नहीं, मैं अभी भोजन करके आया हूँ, उन्होंने कहा- नहीं, आप हमारे घर में भोजन जरूर करिये | दुष्ट ने कहा- नहीं-नहीं, (जबकि पेट में चूहे कूद रहे हैं) | मेजबान ने पुनः आग्रह किया - एक बार ले लीजिये | दुष्ट ने कहा – अच्छा, आप नहीं मानते हो तो थोड़ा सा ले लेंगे | अब भोजन करने बैठे तो उन्होंने कहा - एक और रोटी ले लीजिये | दुष्ट कहता है - नहीं-नहीं | ऐसा

कहके चार-पाँच रोटी खा गया | खिलाने वाला भी झूठा और खाने वाला भी झूठा | अतिथि कह रहा है कि खाकर आये हैं तो किसी ने मेजबान से कहा - अरे भाई ! क्यों जबरदस्ती खिला रहे हो उसको, क्या मारना चाहते हो, तुम क्यों खिलाते हो तो उसने कहा - अरे नहीं भाई, ये सभ्यता है, हमारे घर में आये हैं इसलिए ऐसा तो कहा ही जाता है, कोई भूखा होगा तब भी नहीं कहेगा कि हम भूखे हैं यानि झूठ बोलना सभ्यता है, इसको सभ्यता कहते हैं | जो झूठ बोलता है, वही आदमी सम्माननीय है | तभी तो कहा तुलसीदास जी ने कि – **"जो कोई झूठ मसखरी जाना"** झूठ बोलने वाले को समाज में बड़ा चतुर माना जाता है और सही बोलने वाले को बुद्धू माना जाता है | श्री बाबा महाराज अपने बचपन की एक घटना बताते हैं - जब हम छोटे थे तो हमारे घर के सामने बहुत संपन्न लोग थे, वह हमारी भाभी लगती थीं, उनके द्वारा भोजन का निमंत्रण था तो हम भी गये संध्या को भोजन करने | हमारे मोहल्ले के हमसे बड़े एक व्यक्ति थे कैलाश भइया, वह भी गये भोजन करने | अब हम दोनों के सामने भोजन परोस दिया गया तो हमने विचार किया कि कम पाना चाहिए, ये बड़े हैं, सम्मानीय हैं तो हम इनसे कम पायेंगे जिससे हमारी इज्जत बनी रहे | हमसे भाभियों ने कहा कि बच्चा जी भोजन पाओ तो हमने कहा कि पहले बड़े भैया पायेंगे | उन्होंने हमसे कहा कि पहले तुम ही शुरू करो तो हमने होशियारी दिखाते हुए कहा कि हम इतना नहीं खायेंगे और हमने दो-चार पूड़ी अलग किया, दो पूड़ी रख लिया, हमने कहा हम थोड़ा सा ही पायेंगे | जब पाने लगे तो उन भैया ने क्या किया कि उस पूड़ी का एक कौर तोड़ा और बोले ! हम पाकर के आये हैं, हम इतना ही लेंगे, अब हमको बड़ी शर्म लगी, हमें दो पूड़ी खाना भी मुश्किल पड़ गया | हमको याद है कि मन में विचार आया कि देखो, इनका त्याग कितना है, इन्होंने तो इतना थोड़ा-सा कौर तोड़ के मुँह में रख लिया और हम कैसे पेटू निकले कि दो पूड़ी खा ली | अब उसको जूठा कर के छोड़ना भी ठीक नहीं था, तो दो पूड़ी जो खाना पड़ा, हमको तो वह भी मुश्किल हो गया कि बड़ी भारी हार हुई, हम कैसे नालायक निकले और ये कैसे चतुर निकले, यानि इसको कहते हैं सभ्यता | संसार में इसी को सभ्यता कहते हैं | इस प्रकार हर आदमी अपने कर्मों को छिपाता है, ये जीव की प्रवृत्ति है और वह अपने कर्मों को इतना छिपाता है कि एक मुल्ला जी कहते थे - **"ऐसी चोरी करता हूँ कि खुदा भी नहीं जानता |"** लेकिन खुदा से कोई बात छिपी नहीं है | 'कृष्ण' का एक अर्थ है - कर्षण करना अर्थात् खींचना | जैसे – गोपीगीत में गोपियाँ कहती हैं कि हे श्यामसुन्दर ! आप शरणागत जीव के समस्त पापों का कर्षण कर देते हैं अर्थात् उनका समूल विनाश कर देते हैं, जिसे जीव ने अनादिकाल से छिपा रखा है | हम लोग अपने दुष्कर्मों को हजारों कोठरियों में तालों द्वारा बंद करके रखते हैं | अपने पापों को छिपाते हैं, अपनी गलतियों को ढकते हैं, क्यों ? उसका कारण है –

"मनस्यान्यद् वचस्यान्यद् कर्मण्यान्यद् दुरात्मनाम् ||"

कितना बढ़िया श्लोक है | दुरात्मा कौन है? मन में कुछ है, कहता कुछ है तथा करता कुछ और है | इसके विपरीत संत कौन है? जो मन में है, वही बात वाणी में है और वही कर्म में है, जहाँ कोई छिपाव नहीं है, दुराव नहीं है, इसी गुण पर भगवान् रीझते हैं |

निर्मल मन जन सो मोहि पावा |
मोहि कपट छल छिद्र न भावा ||

(श्रीरामचरितमानस, सुन्दरकाण्ड-४४)

भागवत में भी कहा है कि भगवान् को खरीदना है तो एक जगह ऐसी बात कह गए शुकदेव जी कि यदि तुम संत, गुरुजनों के पास गए हो, वहाँ अगर तुम्हारे हृदय में कपट नहीं है, तुमने वहाँ निष्कपट सेवा किया तो भगवान् बिक जायेंगे |

साधन करना आवश्यक है, लेकिन 'मैं कर रहा हूँ' यह साधन का अहम् नहीं करना चाहिए ।

यस्य नाहङ्कृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते ।
हत्वापि स इमाँल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते ॥
(श्रीगीताजी १८/१७)

जिसमें अहम् नहीं है और जिसकी बुद्धि लिप्त नहीं है, 'लिप्त' अर्थात् कहीं चिपकी नहीं है, आसक्त नहीं है; वह यदि सारे संसार की हत्या भी कर दे, फिर भी उसे पाप नहीं लगेगा ।

साधुसेवानिष्ठ दीनबन्धुदासजी

श्रीबाबामहाराज के एकादशी सत्संग (१३/५/२००७) से संग्रहीत

संकलन/लेखन- डॉ.रामजीलाल जी शास्त्री बी.एस.सी.,एम.ए.द्वय(हिंदी,संस्कृत)
बी.एड.आचार्य (साहित्य),पी.एच.डी., अध्यक्ष- मान मन्दिर सेवा संस्थान,बरसाना

एक होता है कहना और एक होता है करना | कहते सब हैं लेकिन करते कोई-कोई हैं | जीवन की सबसे बड़ी महत्व की बात मरना होती है | इससे ज्यादा और दुःख की कोई बात नहीं होती | भूखा रहना, प्यासा रहना, ये सब तो छोटी बाते हैं | जब ऐसी घड़ियाँ आती हैं तो उस समय भी मन शांत रहे, श्रीजी के चरणों में रहे, अपने धर्म में रहे तो उसको 'भक्ति' कहते हैं | श्रीबाबामहाराज के शब्दों में – "कथा तो बहुत-सी हैं और हम कहते रहते हैं लेकिन आज दीनबन्धुदासजी की कथा हमारे मन में इसलिए आयी क्योंकि अभी हमें लोगों ने बताया कि हमारी माताजी का बोल बंद है, मृत्युलोक छोड़कर के जाने वालीं हैं | हमको लोग बुलाने के लिए आये कि आप चलिए माताजी जा रही हैं | हमने कहा कि जो जा रहा है, उसको कौन रोक सकता है लेकिन हम एकादशी की कथा कहकर ही जायेंगे क्योंकि ब्रजवासीजन बड़ी श्रद्धा के साथ कथा सुनने के लिए आते हैं | अभी हम एक ब्रजवासी से बात कर रहे थे, वह बोले कि हम पिछली एकादशी पर नहीं आ सके, तो हमने कहा कि अगर हम भी नहीं यहाँ रहेंगे तब भी यह परम्परा चलती रहेगी | मानमंदिर में लगभग ६० साल से निष्काम भगवन्नाम हो रहा है | यहाँ बड़े-बड़े कार्य श्रीहरिनाम-संकीर्तन से ही सहज सफल हो रहे हैं | श्रीभगवान् की आराधना से गह्वरवन बचा, ब्रज के कुण्डों, वनों, पर्वतों की सुरक्षा भगवन्नाम की कृपा से ही हो रही है | यहीं से 'श्रीराधारानी ब्रजयात्रा' इस भाव से उठी कि किसी से पैसा नहीं माँगेंगे, धर्म को व्यापार नहीं बनायेंगे | आज इस यात्रा में हजारों लोग चलते हैं, न किसी से माँगा, न चंदा-चिट्ठा किया, केवल भगवान् के नाम का कीर्तन हम लोग करते हैं | जो भी यहाँ आये हो तुम सब खूब कीर्तन करो, प्रभात फेरियाँ बढ़ाओ | मानमंदिर से अभी 'हरिनाम प्रचार' की एक टीम अलवर की ओर घूम रही है और लगभग १२०० ब्रज के गाँवों में संकीर्तन-फेरियाँ चलने लगी हैं, उनमें कई मुसलमानों ने भी नाम लिखवाया है कि हम फेरी करेंगे | तुम सब लोग भी भगवन्नाम को फैलाओ, अगर प्रभात फेरी में नहीं जा सकते हो तो अपने घर में नियम बना लो कि हम ५ मिनट कीर्तन नित्य करेंगे | सभी लोग भगवन्नाम पर विश्वास करके कीर्तन शुरू करो लेकिन बरसाती मेढक नहीं बनो, जैसे मेढक पहले एक साथ आकर के टर्र-टर्र करते हैं और फिर जैसे ही वर्षा का पानी चला जाता है तो पता नहीं वे सब कहाँ गायब हो जाते हैं | ऐसे मत बनो कि थोड़ी देर टर्र-टर्र किये और फिर बंद हो गये | एक बार शुरू कर दो कीर्तन तो वह बंद न हो, इसी बात पर हम तुमको परम भक्त दीनबंधुजी की कथा सुना रहे हैं |" अवन्तिका पुरी में ये हुए थे, उनकी एक स्त्री थी, उसका नाम मालती था | स्त्री थी और दो बेटे थे, एक बेटे का विवाह हो गया था तो एक बहू थी | यानी पाँच आदमी थे | इन्होंने दो कार्य बड़ी निष्ठा से शुरू किये - एक तो कीर्तन और दूसरा आने-जाने वाले भक्तों को भोजन कराना | इसमें उनको बहुत कठिनाई भी हुई, क्योंकि बिना किसी समय के कभी १० भक्त आये, १५ भक्त आये, ५० भक्त आये, अनजान व

असमय में भक्तजन आते ही रहते थे | दीनबन्धुजी तो गरीब थे, किसी प्रकार से भक्त-सेवा करते थे, ऐसे कई साल तक उन्होंने नियम चलाया | बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ आयीं, कभी-२ कीर्तन करने वालों की मण्डलियाँ आ जाती थीं, उनका भोजन कराना नियम था, गरीब थे, सब कुछ बेच दिया, कुछ नहीं रहा | एक दिन स्वयं श्रीभगवान् परीक्षा करने के लिए पहुँचे | भगवान् एक साधु का रूप बना करके उस गाँव में घुसे और बोले – "भाई ! यहाँ कोई है जो हमें भोजन करा दे, इस गाँव में भगवन्नाम होता है क्या?" ठाकुर जी ने अनजान बन करके पूछा | तो लोगों ने कहा कि एक दीनबंधु भक्त है, वह कीर्तन भी करता है और अतिथि सेवा भी करता है | साधु रूप भगवान् बोले – "किधर है उसका घर?" ग्रामीण लोग – "वह जो अंतिम में झोपड़ी दिख रही है, वह है तो गरीब लेकिन आप जब जाओगे तो वहाँ कीर्तन की आवाज आयेगी | उसके परिवार में पाँच आदमी हैं, पाँचों एक-एक करके कीर्तन करते रहते हैं | कीर्तन टूटता नहीं है, अखंड चलता है |" ठाकुरजी की माया से दीनबन्धु के घर में एक काला सांप निकला और जो बड़ा लड़का जिसका विवाह हो गया था, उसको जाकर के काट लिया, वह मर गया | मर गया तो चार आदमी रह गये, चारों ने सोचा कि कीर्तन चलाते रहो, रोओ मत, रोने से क्या फायदा? बड़े पक्के भक्त थे | घर में लाश है और वह कीर्तन कर रहे हैं | इतने में घर के बाहर से संत रूपी ठाकुरजी ने आवाज लगाई – नारायण ! हरि !! राधेश्याम !!!

इतना सुनते ही दीनबंधुजी बोले कि लगता है कि कोई महात्मा आया है और लाश देखेगा तो भोजन प्रसाद भी नहीं खाएगा | इसलिए इस हमारे बेटे की लाश को कोठरी में बंद कर दो और कोई रोना नहीं क्योंकि हमारा नियम है जो भी द्वार पर आया है, उसको भोजन करायेंगे | बेटे की लाश को तो भीतर कमरे बंद कर दिया और साँकर लगा दिया | लड़के की माँ और लड़के की बहू वहीं बैठीं कीर्तन कर रही थीं और उन्होंने कह दिया कि तुम लोग रोना नहीं | कोई महात्मा आया है और उसको भोजन कराना है, उस साधु को बताना नहीं है कि हमारा लड़का मर गया है | वह बहू भी दूसरे घर की बेटी थी लेकिन उस घर में आकर के वह भी उसी भक्ति के रंग में रंग गई थी | उसने सुसर से कहा कि पिताजी मैं रोऊँगीं नहीं, माँ भी बोली कि मैं बिल्कुल नहीं रोऊँगीं, कीर्तन करूँगी, तुम अपनी अतिथि सेवा करो |

दीनबन्धुजी ने दरवाजा खोला और बोले – "आओ महाराज ! बैठो.... | वह तो भगवान् ही थे परीक्षा लेने आये थे, वे आकर के बैठ गए और बात करने लग गये कि अच्छा भाई ! तुम कीर्तन करते हो? सब हँस-हँस के बात करने लग गए | दीनबंधुजी बोले – "हाँ महाराज ! टूटा-फूटा नाम ले लेते हैं | महाराजजी ! अब आप भोजन करिये |" "हाँ, भोजन तो करेंगे ही, भोजन करने ही तुम्हारे यहाँ आये हैं |" साधु बोले | जल्दी से सास-बहू उठीं और झोपड़ी के किनारे जाकर के दाल, रोटी, चावल आदि बनाया | आधे घंटे में रोटी बनकर तैयार हो गई और कोई रो नहीं रहा है, रोने की बात दूर, सब मुस्कुरा रहे हैं; ....कितना कठिन काम है !!! बहू के लिए सोचो तो पति की लाश पड़ी है, माँ के लिए सोचो तो उसका बेटा मरा पड़ा है, लेकिन अपने नियम-निष्ठा की कितनी पक्की हैं कि कीर्तन करती जा रहीं हैं, रोटी बनाती जा रही हैं | साधु को पता ही नहीं पड़ने दिया लेकिन उनको क्या पता कि यह साधु सब जानता है, यह वैसा साधु नहीं है जैसे कि हमलोग लड्डू-पेड़ा दास हैं | थाली लगाकर के आँगन में संत भगवान् को बुलाया (आईये ...! संत भगवान् !! आप प्रसाद पा

जब भगवान् कृपा करते हैं, तब पशुबुद्धि नष्ट हो जाती है।

लीजिए) लेकिन संत भगवान् थोड़ी यह तो स्वयं भगवान् ही हैं | उनको क्या पता कि यह साक्षात् भगवान् ही हैं | संतजी बोले कि एक बात है, हम भोजन तो कर लेंगे लेकिन सब के साथ भोजन करते हैं | तुम सब भी हमारे साथ बैठकरके खाओ क्योंकि हम अकेले भोजन नहीं करते | दीनबंधुजी ने अपनी पत्नी मालती की ओर देखा कि इसका तो बेटा मरा पड़ा है, ये भोजन खाएगी या नहीं | बहू की ओर देखा कि ये क्या कहती है, इसके पति की लाश अन्दर पड़ी हुई है | वे तो पक्के थे अपनी सेवानिष्ठा के, लेकिन प्रायः देखा जाता है कि स्त्रियाँ कच्ची होती हैं, बहुत रोती हैं और ख़ास पति मरा, ख़ास बेटा मरा और कहा जाए कि रोटी खाओ तो कैसे मुँह में ग्रास जायेगा | मालती बोली कि संत भगवान् ! हम सब लोग ही प्रसाद पायेंगे | संत रूपी भगवान् – "अच्छा तो बैठो, थाली लग गई |" एक संत भगवान् की, एक दीनबंधुजी की, एक मालतीजी की, एक बेटा की और एक बहू की थाली परोसी गई | संत भगवान् ने पूछा कि यह जो स्त्री है, क्या यह तुम्हारी बहू है ? तो दीनबंधुजी ने कहा – "हाँ, महाराजजी ...!" संतजी – "तो इसका पति कहाँ है, हमने तुमसे कहा था कि सब लोग बैठेंगे तभी हम खायेंगे | इसका पति कहाँ है?" अब सब चुप कि क्या कहें, अगर कहें कि कहीं बाहर गया है तो भी सही नहीं है, झूठ है | अगर कहें कि भीतर है तो भी सही नहीं है क्योंकि मरा पड़ा है | दीनबंधुजी बोले कि महाराजजी ! वह यहाँ नहीं है | (यह सच भी है और झूठ भी है | यहाँ नहीं मतलब उस लोक 'परलोक' में चला गया |) यहाँ नहीं है, इसलिए हम सब लोग प्रसाद पा रहे हैं | वह संतजी साधारण संत तो थे नहीं, वह तो साक्षात् भगवान् ही थे | तब संतजी बोले – "अरे भाई, यहाँ नहीं है तो कहाँ है? किस देश में गया और किस गाँव में गया? हमको बताओ ?" अब सब शान्त, क्या बोलें ... !! संतजी – "अरे कहाँ, किस गाँव में गया है, कुछ तो बताओ ? मालूम पड़ता है कि तुम लोग झूठे हो, चुप बैठे हो कोई बात है क्या? सच बोलो, हम साधु हैं, हम सब जानते हैं |" इस प्रकार उन्होंने डाँटा | तब दीनबंधुजी बोले – "महाराज ! हमने सही कहा था कि यहाँ नहीं है अर्थात् इस संसार में नहीं हैं |" संत भगवान् – "संसार में नहीं है तो वह कहाँ गया, कब गया बताओ, हमसे सच बोलो |" दीनबंधुजी बोले – "महाराजजी ! इस कमरे में है |" उठे कमरा खोला तो उसकी लाश पड़ी थी | अब वह संत भगवान् तारीफ़ करने की जगह बड़े जोर से डाँटने लगे – "तुम लोग बड़े अधर्मी हो, पाखंडी हो, लाश घर में पड़ी है और तुम लोगों ने बताया नहीं, हमारा धर्म नष्ट करते हो | मुर्दा भीतर पड़ा हुआ है, (दीनबंधु से कहा) तूने रोटी बनवाया, तू कैसा बाप है ? मुर्दा पड़ा हुआ है और तू खाने बैठ गया पेटू | फिर मृतक बेटे की माता को फटकारा कि ऐसी तो माँ हमने दुनिया में नहीं देखी, बेटे की लाश पड़ी है और थाली लेकर के पेटली की तरह खाने के लिए बैठ गई | इसके बाद छोटे भाई से कहा कि अरे ! तू कहाँ से पैदा हो गया, ऐसा नालायक भाई कि बड़े भाई की लाश पड़ी हुई है और तू बैठ गया भोजन के लिए, तुझे शर्म नहीं आती | हमने तो तुम लोगों की तारीफ़ सुना था कि तुम सब बड़े भक्त हो, अरे ! तुम लोग तो बड़े नीच पुरुष हो | पेट भरने के लिए सब खाने बैठ गये और हमारा धर्म भ्रष्ट कर दिया | इसके पश्चात् मरे हुए लड़के की बहू से बोले – "अरी निर्लज्ज, तू राँड़ ही होने लायक है, तेरे पति की लाश पड़ी है और थाली लेकर के खाने बैठ गयी |" इस प्रकार से संत रूपी श्रीभगवान् ने दीनबन्धु व परिवारीजनों को बहुत दुर्वचन कहे – अरे कसाईयो .... **लाश पड़ी है कैसे करी रसोई | तुम सब कैसे भये कसाई ||**

लाश देखकर दया न आयी || चूल्हें में क्यों आग लगाई, तुम सब की कैसे मति खोयी ||

बाप से कहा कि तू पिता नहीं है – "**पिता नहीं तू हिरण्यकशिपु है"** और भाई को देखकर कहा कि अरे, तू कैसा भाई है? **"भाई न तू उपसुंध सुंध है ||"** तू भाई नहीं है | फिर माँ से कहा कि तू माँ नहीं है, काली नागिन है जो अपने ही बच्चों को खा जाती है – "**माता नहीं कृष्ण सर्पिणी है, खाने लगे तुमसी न कोई ||"** इसके बाद बहू से बोले कि अरे, ऐसी तो वेश्या भी नहीं होगी, **"तिरिया नहीं महावेश्या है, पति की लाश छिपा रखी है ||"** ऐसी दुष्ट बहू मैंने नहीं देखी, मैं भी साधु हूँ, बहुत घूमा हूँ, लेकिन ऐसी स्त्री नहीं देखी कि पति की लाश पड़ी है और खाने बैठ गयी | अरी दुष्टा, तुझको शोक नहीं है, रोती नहीं है, पति की लाश घर में है और भोजन कर रही है | "**ऐसी न कहू देखी लुगाई ||"** संत भगवान् ने सबको फटकारा और पूछा कि तुम सब लोग भोजन करने कैसे बैठ गये ? बताओ, तुम कितने पापी हो | तो पहले दीनबंधुजी बोले – "महाराज ! आप ठीक कहते हैं, मैं बड़ा नीच हूँ, बड़ा दुष्ट हूँ लेकिन हमारा नियम है - कीर्तन करना, आने वाले अतिथिजनों को भोजन देना |" साफ़ कह दिया कि हमने जो किया सब ठीक किया | साधु रूपी भगवान् सुनकर के मन में मुस्कुराये कि यह तो बड़ा पक्का है, यह तो हमारी परीक्षा में पास हो गया, इसको कोई घबड़ाहट नहीं है, कह रहा है कि हमने ठीक किया है | लेकिन ऊपर से गुस्से में रहे और बोले – "चल, चल ठीक किया, ठीक किया, बुड्ढे तुझे शर्म नहीं आती, हम साधु हैं हमको ज्ञान सिखाता है |" फिर दीनबन्धु की स्त्री से बोले कि अरी तू, बेशर्म माँ है, बेटे की लाश पड़ी है और तू खाने बैठ गई | तो बेटे की माता बोली – "महाराजजी ! हमारे पति ने जो किया, वह ठीक किया | हमारा नियम है - हम भगवन्नाम लेते हैं, साधु कोई आता है उसको भगवान् समझते हैं और हम अपनी पति की आज्ञा से चल रही हैं, हमने जो कुछ किया ठीक किया |" संतजी – "ठीक किया, अरे ! ऐसा कहती है ?" फिर भाई को फटकारा – "अरे ! तू तो बड़ा दुष्ट है, तू भाई कहाँ, तू खाने बैठ गया |" उसने भी यही कहा कि आप महाराजजी ! कुछ भी कहो लेकिन हमारे पिताजी जो कहते हैं, वह सब ठीक है, हम उसी को धर्म समझते हैं, हम उसी को कर्म समझते हैं, हमारे पिताजी ने जो कुछ कहा है, वह ठीक है, हम ठीक हैं | इसके पश्चात् बहू से बोले – "अरी राँड़ ! तू राँड़ ही होने लायक थी, बेशर्म तू खाने के लिए बैठ गयी | अरे, तू दूसरे के घर से आयी है, इन सब की बुद्धि भ्रष्ट हो गयी है और यहाँ आकर के तेरी भी बुद्धि मारी गयी है | तुझको तो सोचना था कि मैं विधवा हो गई और पति की लाश यहाँ है लेकिन तू तो खाने के लिए बैठ गयी |" वह बहू बड़े जोर से बोली – "संत भगवान् ! आप कुछ भी कहो, मैं भले ही दूसरे घर की बेटी हूँ | मेरा सौभाग्य था कि मैं इस घर में आ गयी, हमारे ससुरजी जो भी कहते-करते हैं, वह बिल्कुल ठीक हैं, वे परम भक्त हैं | हमारी जो 'सास' है, ऐसी 'सास' संसार में नहीं है |" वह संत भगवान् भीतर से मुस्कराने लग गए और मन में विचार करने लगे कि यह तो और अधिक लाल मिर्च निकली, यह हमको ही फटकार रही है | उसने कहा कि ठीक है महाराज ! आप भले ही हमारे ससुर को, सास को और हमारे देवर को फटकार दें लेकिन ये लोग परम भक्त हैं, हमारा भाग्य खराब था, मुझे विधवा होना था सो हो गई लेकिन हम ऐसे घर में आयी हैं कि संसार में ऐसा घर नहीं होगा | ऐसा कह करके बैठ गयी | संत भगवान् बोले कि अच्छा भाई देखो ! हमने तुमको बहुत फटकारा, हमने तुमको बहुत अपमानित किया | अब तुम एक काम करो लाश को यहाँ लाओ, हमारी आज्ञा है | दीनबंधुजी – पहले आप भोजन कर लें |" संतजी – "हम भोजन बाद में करेंगे, सबसे पहले लाश को हमारे पास लाओ |" सब लोग कमरे के अन्दर गये और बड़े बेटे के मृतक शव को उसकी माँ, बहू, भाई, बाप चारों लोग उठाकर के लाये, जिसको काले सर्प ने काट लिया था | अब भगवान् ने ये तो नहीं बताया कि हम ही भगवान् हैं और सर्प भी हम ही बन करके आये थे | लेकिन उन्होंने कहा कि हम सर्प का विष, मन्त्रों द्वारा

उतारना जानते हैं | ये नहीं कहा कि हम कौन हैं | बोले – "देखो ! हम अभी मन्त्र मारते हैं और इसका जहर उतर जायेगा | उन्होंने झूठ-मूठ का मन्त्र पढ़ा, ढोंग-ढांग किया जैसे मन्त्र वाले मारते हैं | मंत्र पढ़कर मारा तो लड़का उठ करके बैठ गया लेकिन अभी लड़के की परीक्षा बाकी थी, जब वह उठ करके बैठ गया तो संत भगवान् बोले – "देख ! तू मेरी बात समझ | तू मर गया था, मैनें जहर उतारा, तू जिन्दा हुआ लेकिन मूर्ख तेरा बाप इतना नालायक है कि थाली लेकर के बैठा था, तेरी लाश पड़ी थी और भोजन करने बैठ गया था | ऐसा नालायक बाप क्या दुनिया में होगा ? तेरी माँ, ये माँ नहीं, इसमें काली नागिन की तरह दुर्गुण हैं, तेरी लाश भीतर कमरे में बंद करके, यहाँ भोजन करने के लिए हमारे साथ बैठी थी; मैं तुझे बता रहा हूँ कि तेरा परिवार कितना गंदा है | देख ! यह तेरा भाई है, यह बड़े खुशी से भोजन करने बैठा कि अच्छा हुआ कि बड़ा भाई मर गया | जिसको तू विवाह करके लाया था, यह तेरी बहू वेश्या से भी गंदी है, भोजन करने बैठ गयी, खुश हो रही कि हमारा पति मर गया, दूसरा ब्याह कर लूँगी |" इतना सुनते ही वह लड़का बोला – "महाराजजी ! आप संत हैं, अतिथि हैं, हम आपसे कुछ नहीं कह सकते | अतिथि के नाते हमारे पिताजी ने कुछ नहीं कहा लेकिन हम जानते हैं, हमारे पिताजी सही हैं, ऐसे पिता संसार में नहीं होंगे, आप क्या कहते हैं ? हमारी माँ सही है, ऐसी माँ दुनिया में नहीं होगी | आप ही तो कहते हैं कि ऐसी माँ हमने नहीं देखा | हमारा भाई सही है, हमारी स्त्री सही है, ऐसी स्त्री पाकर के हम धन्य हो गये जिसने कि अपने धर्म के पालन के लिए हमारे घर की जो परम्परा थी कि भगवान् का नाम लेना, अतिथि को भोजन कराना, इसलिए हम इन चारों जनों के ऋणी हैं | मरना जीना तो होता ही रहता है, मरना तो था ही |"

अब तो संत भगवान् सोचने लगे कि यह भी पास हो गया, ये पाँचों हमारी परीक्षा में उत्तीर्ण हो गये | संत रूपी भगवान् बोले कि अच्छा सुनो भाई ! तुम लोग हमारे पास बैठो | पाँचों को बैठाया और कहा कि तुम जानते हो मैं कौन हूँ ? दीनबंधुजी बोले कि हाँ महाराज ! आप संत भगवान् हैं,हम यही जानते हैं | संतजी – "नहीं, नहीं संत भगवान् नहीं, मैं साक्षात् भगवान् ही हूँ | मैं तुम्हारी परीक्षा लेने आया था, तुम सब पास हो गये, बड़े धर्म के पक्के हो, अब मेरा असली दर्शन करो |" संतजी ने रूप बदल दिया, मोर मुकुट, हाथ में वंशी, पीताम्बर, कानों में कुंडल, गले में वनमाला, मुस्कराते हुए साक्षात् श्रीकृष्ण स्वरूप में प्रकट हो गये | परम भक्त श्रीदीनबन्धुदासजी ने सपरिवार श्रीठाकुरजी की माधुर्यमय मनमोहिनी रूप छवि को देखा, जिससे भाव-विह्वल होकर प्रेमसिन्धु में डूब गए | अतः कथनाशय है कि साधु-संतों की सेवा में यदि ऐसा पक्कापन (सुदृढ़ निष्ठा) आ जाए तो साक्षात् श्रीभगवान् भी हार मानकर उस सेवानिष्ठ भक्त के प्रेमाधीन हो जाते हैं |

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना ।
अमानिना मानदेन कीर्त्तनीयःसदाहरिः॥ (शिक्षाष्टकम-३)

तिनका से भी छोटे बनो फिर और बातें स्वयमेव आ जायेंगी – सहिष्णुता, अमानिता, मानदेनता, भगवान् का कीर्तन आदि। तुम निरपराध भजन करते जाओ, भगवान् तुम्हारी जिम्मेदारी अपने-आप लेंगे, स्वयं हृदय में आकर तुम्हारे मैल को दूर कर हृदय को स्वच्छ करेंगे, योगक्षेम धारण करेंगे। चिन्तन अनन्य अर्थात् अपराध शून्य होना चाहिए। कोई त्रुटि हो जायेगी, कोई पाप बन जायेगा तो उसे भगवान् का स्मरण अपने-आप नष्ट कर देगा |

भक्ति का प्रतिबिम्ब 'गौ-आराधन'

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'गौ-महिमा'(५/८/२०१२) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी श्रीजी, मानमंदिर, बरसाना

सृष्टि जबसे शुरू हुई है तब से गायों का महत्व बराबर बढ़ रहा है | कलियुग में घट गया है | सृष्टि के प्रारंभ में ही ऋचाओं में, वेदों में, पुरुषसूक्त आदि सबमें गायों का वर्णन आता है | वेदों में तो गौसूक्त तक कहा गया है, जैसे - वेदों में पुरुषसूक्त, श्रीसूक्त, इन्द्रसूक्त हैं, वैसे ही गौसूक्त भी है | हर अवतार में गायों की महिमा वर्णित की गई है | यहाँ तक कि वाल्मीकि रामायण के अनुसार जब श्रीरामचन्द्रजी वनवास के लिए गमन करने वाले थे तब उन्होंने सरयू किनारे, जहाँ गायों के झुंड के झुंड थे, वहाँ त्रिजट नाम के एक ब्राह्मण को बुलाया | रामजी ने उससे कहा – "त्रिजट ! तुम अपना डंडा घुमा करके फेंको, जितनी दूर तक तुम्हारा डंडा जायेगा, वह सब गायें तुम्हारी हैं |" भगवान् ने सोचा कि गौदान से ही मंगल प्रारंभ हो जाए | वन में जाना है, उनको मालूम था कि हम रावण को मारने के लिए जा रहे हैं; आपत्तियाँ आयेंगी, सीताहरण होगा, इसीलिए हम कुशल से अपनी लीला समाप्त करके यहाँ (अयोध्या) आ जायें, इसके लिए गौदान आवश्यक है

तं तीर्थवा सरयूपारं, दण्डस्य तस्य कराचुताः |
गौव्रजे बहुसाहस्रये कापातमोक्षणाः सन्निधौ ||

उन्होंने त्रिजट को डंडा दिया और उसने डंडा फेंका, हजारों गायें उस डंडे की सीमा में आयीं और सब गायें भगवान् ने दान कर दीं | यहाँ तक कि वन जाते समय सीताजी जब यमुना पार कर रही थीं तो जिस बेड़ा से वह पार हो रही थीं, उसे यमुनाजी के बीच में रुका दिया और तीनों (राम, लक्ष्मण, सीता) ने यमुनाजी की स्तुति किया – **कालिन्दीमध्यमायाता सीता त्वेनामवन्दतस्वस्ति देवि तरामि त्वां पारयेन्मे पतिर्व्रतम्** (श्रीवाल्मीकिरामायणजी, अयोध्याकांड- ५५/१९/२०)

सीता जी ने यमुना जी की स्तुति किया और ये कहा - हे माँ यमुना ! मेरे पातिव्रत की रक्षा करना क्योंकि उनको मालूम था कि वन में निशाचर मिलेगा, मेरा हरण होगा | पातिव्रत की रक्षा आराधना से होती है | माया से पार होने की भगवान् ही भक्त को शक्ति देते हैं क्योंकि माया से कोई लड़ नहीं सकता इसीलिए भगवान् ने कहा है –

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥

(श्रीमद्भगवद्गीताजी ७/१४)

भगवान् ने कहा – हे अर्जुन ! मेरी दैवी माया (देव की है, मनुष्य की नहीं है) गुणमयी है, दुरत्यय है (दुःखेन अत्याः इति दुरत्यः), उसको पार करना अत्यंत कठिन है लेकिन मेरी शरण में आने के बाद तू इस माया से पार चला जायेगा | मेरी शरण में जो भी आता है, वह माया से पार चला जाता है | कोई भी व्रत, कोई भी तप, बिना भगवान् की आराधना के पूरा नहीं होता | चाहे कितना भी बड़ा तपस्वी है, चाहे कितना भी बड़ा दानी है, चाहे कितना भी बड़ा यज्ञ करने वाला है, चाहे कितना भी बड़ा योगी है, शास्त्रवेत्ता है, बिना भगवान् को समर्पण किये न दान पार लगायेगा, न योग पार लगायेगा | जब भगवान् की शरण में आयेगा; तभी उसके सब साधन सफल होंगे |

शुकदेव जी ने कहा है –

तपस्विनो दानपरा यशस्विनो
मनस्विनो मन्त्रविदः सुमङ्गलाः ।
क्षेमं न विन्दन्ति विना यदर्पणं

तस्मै सुभद्रश्रवसे नमो नमः ॥

(श्रीभागवतजी २/४/१७)

कितना भी बड़ा तपस्वी है, कितना भी बड़ा दानी है, कितना भी बड़ा यशस्वी (यज्ञ करने वाला) है, चाहे कितना भी बड़ा (मनस्वी) मन को जीतने वाला योगी है, मन्त्र जानने वाला योगी है, सदाचारी, संयमी है लेकिन उसका कल्याण बिना भगवान् के अर्पण किये नहीं होगा | उन भगवान् को हम नमस्कार करते हैं | श्रीमद्भागवत गाने से पहले शुकदेव जी ने यह स्तुति किया है | शुकदेव जी का एक यह भी भाव है कि जो श्रीमद्भागवत हम कहने जा रहे हैं, उससे संसार का कल्याण होवे | वस्तुतः आराधना के कारण 'श्रीमद्भागवतजी' आज एक नौका बन गई हैं, जो सबको पार लगा रही हैं | सीताजी ने भी इसीलिए यमुनाजी की वंदना किया कि हे देवी ! हमारे पातिव्रत की रक्षा करना | आराधना के बिना रक्षा नहीं होती है | आराधक को भगवान् बचाते हैं; नहीं तो माया से जीव कैसे लड़ सकता है? ये माया तो –

नाहं न यूयं यदृतां गतिं विदुर्न वामदेवः किमुतापरे सुराः ।
तन्मायया मोहितबुद्धयस्त्विदं विनिर्मितं चात्मसमं विचक्ष्महे ॥

(श्रीभागवतजी २/६/३६)

ब्रह्माजी कहते है कि हे नारद ! न मैं (ब्रह्मा), न तुमलोग मेरे पुत्र (ब्रह्मपुत्र) और न शंकरजी ही जिन भगवान् की गति को जान सकते हैं फिर और देवताओं की तो बात ही क्या ? उसकी माया से मोहित बुद्धि वाले हमलोग, अपनी-अपनी बुद्धिशक्ति के अनुसार अंदाज लगाते हैं लेकिन जान नहीं पाते हैं |

सिव बिरंचि कहुँ मोहइ, को है बपुरा आन ।
अस जियँ जानि भजहिं मुनि, मायापति भगवान ॥

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड- ६२)

जिन भगवान् की माया से ब्रह्मा, शंकर भी मोहित होते हैं तो बेचारे दूसरों की क्या चलाई? इसलिए सीताजी कहती हैं – "हे यमुने ! मेरे पातिव्रत की रक्षा करना | जिस समय मैं अयोध्या लौटूँगी तब एक हजार गायों से आपकी आराधना करुँगी |" यह इसलिए बताया क्योंकि चाहे राम हों, चाहे सीता हों, प्रत्येक कार्य को वे गाय की आराधना से शुरू करते हैं | श्रीमद्भागवत में लिखा है –

धेनुनां रुक्मशृंगीणां साध्वीनां मौक्तिकस्त्रजाम् |
पयस्विनीनां गृष्टीनां सवत्सनां सुवाससाम् ॥
ददौ रूप्यखुराग्राणां क्षौमजिनतिलैः सह | अलंकृतेभ्यो विप्रेभ्यो बद्धं बद्धं दिने दिने ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/७०/८,९)

द्वारका में भगवान् श्रीकृष्ण गुरुजनों की पूजा करके, तुरन्त की ब्याही हुई गाय, बछड़ा समेत तथा चांदी से खुरों को मढ़ करके, रेशमी कपड़ों से ढक करके १३ हजार गायें नित्य दान करते थे | इसलिए 'रामलीला, कृष्णलीला' दोनों से प्रमाण सहित बताया गया | ब्रजलीला 'नंदोत्सव' में भी नंदबाबा ने दो लाख गायों का दान किया था, गौदान करके ही नंदोत्सव मनाया गया | रामायण में भी 'राम-विवाह' के अवसर पर वर्णन है –

चारि लच्छ बर धेनु मगाई ।
कामसुरभि सम सील सुहाई ॥

(श्रीरामचरितमानसजी, बालकाण्ड- ३३१)

दशरथजी ने चार लाख गाय दान दिया था | इसलिए वर्तमान समय में साधुओं के आश्रम में तो अवश्य ही गाय रहनी चाहिए, नहीं तो आश्रम, आश्रम नहीं है, आश्रम की शोभा गायों से होती है | जिस समय पांडव जब अज्ञातवास कर रहे थे क्योंकि जुये में सब राज्य, द्रोपदी आदि सब कुछ हार चुके थे | उस समय १ साल का अज्ञातवास भी ठहरा था | कौरवों की पांडवों के लिए यह शर्त थी कि १२ साल तो वन में रहोगे और १ साल तुमको छिप करके रहना पड़ेगा | अगर हमारे गुप्तचर लोग ढूँढ़ लेंगे

तो फिर तुमको १२ साल जंगल जाना पड़ेगा | ऐसा दाँव कौरवों ने मारा था कि ये कहाँ छिपेंगे? धरती, आकाश, पाताल आदि सब जगह हमारे गुप्तचर ढूँढ़ लेंगे और इसके बाद फिर १२ साल के लिए जंगल में जाओ | १२ साल के बाद पुनः एक साल का अज्ञातवास | अज्ञातवास में अगर पता लगा लिया जायेगा तो फिर से १२ वर्ष का वनवास | यानि जन्म भर जंगल का वास भोगते रहो, राजा तो तुम नहीं बन पाओगे | ऐसा दाँव मारा था कौरवों (शकुनि) ने | बारह साल पांडवों ने वनवास किया, जंगल में कष्ट सहे कुन्ती को साथ लेकर के | एक साल जब अज्ञात वास उन्होंने किया तो कौरव ढूँढ़ नहीं पाये | ढूँढ़ते कैसे ? क्योंकि उन लोगों ने ऐसा वेश बदल लिया था और हिन्दुस्तान से बाहर जनकपुर की ओर विराट नगर में जाकर के उन्होंने नौकरी किया | अर्जुन को तो उर्वशी का शाप था कि एक साल तक तुम नपुंसक बन जाओगे | उर्वशी मोहित होकर के आयी थी और अर्जुन ने उसको कहा था कि तुम मेरी माँ हो | उर्वशी ने कहा कि हम लोग अप्सरा हैं, किसी की माँ नहीं हैं, हम लोग भोग्या हैं, हमें देवता लोग भोगते हैं | हम किसी की माँ नहीं बनती हैं | अर्जुन का अन्तःकरण स्वच्छ था, वह भगवान् के सच्चे भक्त थे | काम तो उनको सता ही नहीं सकता था | उन्होंने कहा – "नहीं, तुम मेरी माँ हो |" उर्वशी ने शाप दे दिया – "मूर्ख, मैं तो तुझे 'भोग-सुख' देने आयी हूँ और तू मुझे माँ बना रहा है | जा, तू हिंजड़ा बन जा, तुझमें पौरुष न रहे |" अर्जुन भी शाप सुनकर के घबड़ाये नहीं, उन्होंने सोचा कि चाहे मेरा प्राण चला जाये, मनुष्य को धर्म नहीं छोड़ना चाहिए | विदुरजी ने पांडवों से चलते समय यही कहा था कि पांडवों ! तुम्हारे ऊपर आपत्ति आयी है लेकिन धर्म ही पार लगाता है, तुम लोग सदाचार से रहना, तुम्हारी रक्षा हो जायेगी, चाचा विदुरजी ने यह शिक्षा दिया था; अर्जुन ने उसी शिक्षा का पालन किया, ब्रह्मचर्य से रहे | उर्वशी ने शाप दे दिया, अर्जुन घबड़ाये नहीं, इन्द्र के पास गये और उनसे कहा कि देवराज, मुझको तो माताजी ने शाप दे दिया | इंद्र बोले – "कैसा शाप ?" अर्जुन ने बताया कि काम भाव से वह मेरे पास रात में आयी थीं, मैंने उनको माँ कहा तो नाराज हो गयीं और शाप दे दिया | इन्द्र बोले – "मैंने ही उर्वशी को भेजा था, तुम आसक्ति से उसका नृत्य देख रहे थे तो मैंने सोचा कि तुमको भी स्वर्ग का सुख 'भोग' मिल जाये |" अर्जुन बोले – "देवराज ! मैं यहाँ (स्वर्ग में) भोगी बनने नहीं आया हूँ | मुझको चाचा विदुरजी ने कहा था कि तुम्हारे ऊपर जो आपत्तियाँ आयी हैं, संकट है, वह सब तभी जायेगा, जब तुम सदाचार-संयम से रहोगे | भोगी का संकट बढ़ जाता है और संयमी का संकट घट जाता है |" इन्द्र ने कहा – "अच्छा ! तुम जैसा संयमी तो स्वर्ग में आज तक नहीं आया | उर्वशी जो कि 'त्रिलोक-सुन्दरी' है, वह स्वयं तुम्हारे पास गयी और तुमने उसे स्वीकार नहीं किया | ऐसा संयमी आज तक स्वर्ग में नहीं आया, तुमने संयम का कीर्तिमान स्थापित किया है क्योंकि देवता भी उर्वशी को तरसते हैं, तुमने एक रिकार्ड कायम किया कि उर्वशी को छोड़ दिया, ठुकरा दिया | उर्वशी को ठुकराने वाला अभी तक कोई स्वर्ग में नहीं आया था | हम तुम्हारे संयम से प्रसन्न हैं | तुम्हारे शाप को हम वरदान में बदल रहे हैं | उसने तुमको शाप दिया कि तुम जीवन भर के लिए हिंजड़े बन जाओ लेकिन मैं उसको घटा रहा हूँ क्योंकि मैं देवराज हूँ , देवताओं का राजा हूँ | अप्सरायें आदि तो बहुत छोटी चीज हैं, वे तो केवल स्वर्ग की भोग्यायें हैं | मेरे वरदान के आगे उर्वशी का शाप कुछ नहीं चलेगा, उसका शाप एक साल के लिए हो जायेगा, जब तुम अज्ञातवास करोगे तब तुम्हारा स्त्री का शरीर बन जायेगा |" संसार जानता है कि अर्जुन

महायोद्धा, महारथी, महापराक्रमी है, जिसकी भुजाओं में अनंत शक्ति है, गांडीव धनुष की टंकार से ही सेना काँप जाती है, कोई समझ ही नहीं पायेगा कि उपयुक्त लक्षणों से युक्त व्यक्ति भी नपुंसक बन जायेगा | तो इस तरह से पांडव विराट नगर में छिप करके रहे, भीमसेन रसोइया बन गये, सहदेव ग्वारिया बन गये, नकुल अश्वपाल बन गये, युधिष्ठिर कंक बन गये | उन्हें कोई भी नहीं पहचान पाया | कोई सोच भी नहीं सकता है कि अर्जुन जैसा महारथी स्त्री बन गया | एक साल तक कौरवों के गुप्तचर सारी दुनिया में पांडवों को ढूँढ़ते रहे लेकिन किसी को कुछ पता नहीं चला | आखिर में कौरव लोग पितामह भीष्म के पास जाकर बोले कि पितामह ! हम अब जीते हुए भी हार रहे हैं | अज्ञातवास में हम पता नहीं लगा सके कि पांडव कहाँ हैं | अब वे आ जाएँगे तो राज्य के लिए लड़ेंगे और इस तरह से जीते हुए भी हम हार जाएँगे; युद्ध होगा, जिसमें भीम, अर्जुन का सामना करने वाला कोई नहीं है | आपको मालूम है कि पांडव कहाँ हैं, आप कृपा करके बताइये क्योंकि आपकी प्रतिज्ञा है कि हम इस सिंहासन की सहायता करेंगे, अब यह सिंहासन जा रहा है | भीष्मजी ने कहा – "दुर्योधन ! भीष्म कभी झूठ नहीं बोलता है, भीष्म सदा अपनी प्रतिज्ञा पर स्थिर रहता है | तुमको यह शंका है कि पांडवों से हमारा संपर्क चल रहा है, लेकिन हमें भी पता नहीं है कि पांडव कहाँ हैं?" तब दुर्योधन ने कहा – "पितामह, हम विश्वास करते हैं कि आपको पता तो नहीं है लेकिन आप बड़े दूरदर्शी हैं, पांडव कहाँ हैं, इसका अंदाज तो आप बता ही सकते हैं क्योंकि आप बड़े बुद्धिमान हैं, त्रिकालदर्शी हैं |" तब भीष्मजी ने कहा कि मैं असत्य नहीं बोलता हूँ | मैं तुमको अंदाज से बता सकता हूँ कि पांडव कहाँ हैं? निश्चित नहीं कह सकता लेकिन सुनो ! जहाँ भगवान् के भक्त रहते हैं, उस देश की पहचान है कि वहाँ गायें बढ़ती हैं, वहाँ दूध बढ़ता है, दही बढ़ता है, घी बढ़ता है | गाय के जितने पदार्थ हैं, भक्ति के प्रताप से वहाँ बढ़ते हैं | तो वहाँ समझ जाना चाहिए कि यहाँ भगवान् के भक्त रहते हैं | भगवान् की भक्ति की महिमा से गाय, ब्राह्मण इन सब के लिए भगवान् का अवतार होता है, बिना कहे ये सब बढ़ते हैं –

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार ।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार ॥

(श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड- १९२)

भीष्मपितामहजी ने कहा -

गावश्च बहुलास्तत्र न कृशा न च दुर्बलाः ।
पयांसि दधिसर्पींषि रसवन्ति हितानि च ॥

(महाभारत, विराटपर्व २८/२२)

सुनो ! जहाँ पांडव हैं, उस देश की पहचान बता रहा हूँ | उस देश में भक्ति के प्रभाव से गायें बढ़ रही होंगी, कमजोर नहीं होंगी, दुर्बल नहीं होंगी, पुष्ट गायें होंगी | वहाँ दूध-दही की नदियाँ बह रही होंगी | दूध, दही, घी, छाछ आदि रसमय पदार्थ वहाँ बढ़ रहे होंगे | यही तो भगवान् कृष्ण के अवतार की विशेषता थी | जब भगवान् यहाँ ब्रज में थे तो आज तक कहा जाता है –

'नंदगाँव बरसानो दूध-दही को खानों'

मच्चित्ता मद्गतप्राण बोधयन्तः परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥ (गी.१०/९)

जो हमारे भक्त हैं, जिनका चित्त मुझमें है और मुझमें जिनका प्राण व इन्द्रियाँ हैं, वे परस्पर एक-दूसरे को बोध देते हैं, भगवच्चर्चा करते हैं, संतुष्ट होते हैं।

श्रीकृष्ण की प्रेमाधीनता

श्रीबाबामहाराज द्वारा कथित श्रीभागवतजी (२२/२/१९८५)
संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी तुलसीजी,दीदीजी गुरुकुल की छात्रा, मानमंदिर, बरसाना

कौरव राजा लोग मारे तो पीछे गए, जा समय द्रौपदी के बाल छुए हैं दुःशासन ने खेंचवे के लिए, वाई समय कौरवन को और जो उनके पक्षपाती होंय, उनको नाश हो गयो भक्त नारी के अपमान से |

कचस्पर्शक्षतायुषः ॥ (श्रीमद्भागवतजी १/८/५)

उनके कल्याण के लिए पांडवन् ने जलदान दियो फिर सबसे आज्ञा लेकर के भगवान् जब द्वारका को चलवे के लिए तैयार खड़े भये तो देखा कि उत्तरा आ रही है जो अभिमन्यु की पत्नी और परीक्षित की माँ थी, वो कह रही थी –

पाहि पाहि महायोगिन् देवदेव जगत्पते ।
नान्यं त्वदभयं पश्ये यत्र मृत्युः पररस्परम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/८/९)

हे महायोगी ! मेरी रक्षा करो, मेरे को भले ही अग्नि जला दे परन्तु मेरा गर्भ सुरक्षित रहे | भगवान् ने विचार कियो – ओहो ! द्रौपदी और पांडवन् ने अश्वत्थामा के ऊपर इतनी दया करके छोड़ दियो और फिर जाके वो बदला चुका रह्यौ है | वाने पाँच बाण पाण्डवन् के ऊपर छोड़े कि सब नष्ट हो जाएँ, सारी पृथ्वी पांडवों से रहित हो जाये, उनके बीज-वंश से रहित हो जाये | भगवान् ने सुदर्शन चक्र को आवाहन कियो | वैष्णवतेज के आगे ब्रह्मतेज अपने आप शान्त हो जायगो, चाहे कोई तेज हो, वैष्णवतेज तो सबसे महान होय और अपनी माया से भगवान् ने उत्तरा के गर्भ के ऊपर एक ऐसो आवरण रच दियो कि वैष्णवीमाया के प्रभाव से ब्रह्मास्त्र गर्भ तक पहुँचई नहीं सकै | यद्यपि ब्रह्मास्त्र को कोई शांत नहीं कर सकै लेकिन वैष्णवतेज असाध्य है, वैष्णवतेज के सामने ब्रह्मास्त्र शांत ह्वै गयौ और सबकी प्राण रक्षा हो गयी | जब कन्हैयाजी चलवे लग गए तो कुंतीजी आयीं,
उन्होंने बड़ी लम्बी स्तुति करी है | या स्तुति में एक बड़ी अच्छी बात कुन्तीजी ने कही कि हे श्यामसुन्दर ! आपको नमस्कार है, आप अवतार क्यों लो ?' (याको बहुत विलक्षण कारण कुंतीजी ने बतायो कि कृष्णावतार क्यों होय ?)

तथा परमहंसानां मुनीनाममलात्मनाम् ।
भक्तियोगविधानार्थं कथं पश्येम हि स्त्रियः ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/८/२०)

आप कृष्ण रूप से जो यहाँ आये हो, क्यों आये हो, सो कह रहीं हैं कि असुरन को मारनो कोई विशेष कारण नहीं है, ये तो आपके संकल्प मात्र से ही असुर मर सकें | धर्म की स्थापना भी आचार्य रूप से आप करते आये हो | ये बड़े-बड़े आचार्य भी भगवान् ही तो हैं किन्तु एक काम ऐसो है जो आपके बिना कोई नहीं कर सकै , वो ये है कि जो बड़े-बड़े परमहंस हैं, निर्मल जिनको चित्त है, जो माया से मुक्त हैं, उन सबको भक्ति देवे के लिए आप कृष्ण बने हैं | ये कैसे, पहले तुमने अनेक अवतार धारण किये हैं, किन्तु श्यामसुन्दर ने ब्रज में जो प्रेमरस, महारास आदि प्रगट कियो, ये रस काउ अवतार में बिना उन (कृष्ण) के प्रगट भये नहीं हो सकै | परमहंस लोगन के लिए कोई कोर्स नहीं होय, उनकी पढ़ाई ख़त्म भयी, जैसे एम. ए. तक कोई पढ़ गयो तो आगे उसकै लिए कोई क्लास ही नहीं है, फिर आगे पी.एच.डी.करो | वैसे ही परमहंस लोगन को सब कोर्स ख़तम, उनके लिए भी भक्ति दान करवे के लिए ही श्रीकृष्णावतार होवे | और एक बात कही कुन्तीजी ने – 'हे श्यामसुन्दर ! हमको तो विपत्ति दो |' देखो, हम लोग कैसे हैं और कुन्तीजी कैसी हैं ? हम लोग तो माँगेंगे – "हे महाराज ! हमको सुख दो, पैसा दो, नाम दो |" भले ही हम भाषण कर रहे हैं कि हम निष्काम हैं लेकिन जब अपने नाम की बात सुनेंगे तो खुश हो जायेंगे, दस रुपये का नोट देखेंगे तो खुश हो जायेंगे क्योंकि भीतर चोर छिपो भयो है, जबकि हम लोग बात करें निष्कामता की | कुन्तीजी को सब सुख प्राप्त हैं, पूरे भूमण्डल पर उनके पुत्रन् को

अधिकार है फिर भी कह रहीं हैं कि महाराज वो विपत्तियाँ नहीं है, हमको विपत्ति दो | जब-जब हमारे ऊपर विपत्तियाँ आयीं, तब-तब आप हमें धीरज बँधाने आये | यही भाव सूरदासजी ने लिखो – **'अब वे विपदा हू न रहीं'** क्योंकि अच्छे खानदान में जन्म हो जाना - जैसे आचार्य-गोस्वामी या ब्राह्मणकुल में जन्म होना, ऐश्वर्य, वेदाध्ययन, बहुत तेजस्वी बन जाना – ये सब चीजें मनुष्य के मद को बढ़ाती हैं और ऐसो आदमी, जाके अंदर मद है, वह तो भगवान् को नाम भी नहीं ले सकै, भजन तो कहा करैगो | एक बड़ी सुंदर बात और बोली है कुन्ती जी ने –

गोप्याददे त्वयि कृतागसि दाम तावद् या ते
दशाश्रुकलिलाञ्जन सम्भ्रमाक्षम् ।
वक्त्रं निनीय भयभावनया स्थितस्य सा मां
विमोहयति भीरपि यद्बिभेति ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/८/३१)

हे प्यारे श्यामसुन्दर ! हमें तो तुम्हारी वो छवि याद आवे जब तुमने अपराध कियो, माँट-मटका फोड़े हैं तो रस्सी लीनी है मैया ने बाँधवे को तो मैया के हाथ में रस्सी और लकुट देखकर के तुम्हारे जो नेत्र हैं, डर के कारण उनसे आँसू बहवे लग गए | बालमुकुन्द श्यामसुन्दर देख रहे हैं कि मैया लकुट लेकर कहीं मारे नहीं या लिए भय के कारण उनकी आँखों से आँसू बह रहे हैं और उन्होंने इतने आँसू बहाए बड़े-बड़े नेत्रन से कि मोटे-मोटे आँसू की बूँदों ने ढरक-ढरक के सबरो काजल धो दियो | बड़ो गाढ़ो काजल लगायो यशोदारानी ने किन्तु भय के मारे इतने आँसू बहे कि सबरो काजल मोहड़े पर फ़ैल गयो और काजल से पुतो भयो मोहड़ो और वामे मोती-सी आँसू की बूंदें और उन आँसू की बूंदन के बीच में तुम्हारे भय से घबराते नेत्र ऐसे फड़फड़ा रहे थे जैसे पखेरू उड़ रहे हों और भय से तुम अपनो मुख नीचे ले गये कि मैया कहीं मेरे गाल पर चाँटा न मार दे, तो हे प्यारे ! जिन तुमको देखकर काल भी भयभीत होय, वो तुम्हारी दशा मुझे याद आवे, वो मीठी लीला तुम्हारी याद आवे अर्थात् कुन्तीजी भी ब्रज की याद कर रहीं हैं | कुन्तीजी हों, चाहे भीष्मजी हों, ऐसो कौन है जो ब्रज की मधुरता को भूल सकै, भूलइ नहीं सकै | श्यामसुन्दर की मधुर लीला जो परमहंसों को भी मोहित कर देने वाली है, याको कोई कैसे भूल जाएगो चाहे कुन्ती हों, चाहे भीष्म हों और आपको जन्म क्यों भयो है तो यहाँ पर अवतार के कई कारण बताये गये हैं जैसे यदु को प्रिये करवे के लिए या स्वयं पहले भी देवकी-वसुदेव ने पूर्व जन्म में पृश्नि-सुतपा के रूप में आपसे याचना करी तब आपने अवतार लियो | अवतार की कथायें प्रसिद्ध हैं अथवा संसार के क्षेम के लिए आपने अवतार लियो अथवा असुरों के वध के लिए अथवा पृथ्वी के उद्धार के लिए अथवा आखिर में कुंती बता रहीं हैं कि भवसागर से तारवे के लिए अपनी लीला को विस्तार करने के लिए, यह अवतार को छठवों कारण है और आख़िरी सातवों कारण बताते हुए (श्रीव्यासजी ने) यहाँ कलम तोड़ दियो अर्थात् बोलनो बंद कर दियो कि वस्तुतः अवतार भयो है आपके रसिक भक्तों के आनंद के लिए |

श्रृण्वन्ति गायन्ति गृणन्त्यभीक्ष्णशः
स्मरन्ति नन्दन्ति तवेहितं जनाः ।
त एव पश्यन्त्यचिरेण तावकं
भवप्रवाहोपरमं पदाम्बुजम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/८/३६)

अवतार के ये सब कारण तो क्रम से महत्वपूर्ण होते गए हैं किन्तु अंतिम कारण यही है कि रसिक भक्तन् को आनंद मिले, आपको अवतार या लिये भयो और कोई बात नहीं है | कुंती बोलीं - और हमें अब आप क्यों छोड़ रहे हो, हमको मत छोड़ो, यहीं विराजो, पृथ्वी पर, धराधाम पर ही विराजो | जब ऐसी स्तुति कुंती ने करी तो भगवान् तो हैं ही प्रेम के आधीन, वह बोले – "अच्छा ठीक है, हम अभी और रुकेंगे |" युधिष्ठिरजी ने भी आग्रह कियो कि प्रभु विराजो और मेरो अज्ञान देखो कि कितनी अधिक अक्षौहिणी सेना मैंने मरवा दियौ | (रथ, हाथी, पैदल, घुड़सवार मिलके अक्षौहिणी सेना बने है | यामें जितने रथ होंय, उतने ही हाथी होंय, दोनों की संख्या २१,८७० होय | २१,८७० रथ, २१,८७० हाथी, १,०९,३५०

पैदल और ६५,६०० घुड़सवार –इतनी सेना को अक्षौहिणी कह्यो जाय |) अक्षौहिणी सेनान् को हमने नाश करायो, एक अश्वमेध यज्ञ करवे से कैसे पाप नष्ट होय सकें तो भगवान् ने विचार कियो कि मुझे हस्तिनापुर में अभी रुकनो चाहिए क्योंकि युधिष्ठिर को मोह है | श्यामसुन्दर रुक गए और जहाँ पर भीष्मजी थे, युधिष्ठिर को उनके पास ले गए | अपने भक्त को मान बढ़ायवे के लिए श्यामसुन्दर गए | उनके पीछे-पीछे सब बड़े-बड़े ऋषि गए, नारद जी भी गये, व्यासजी गये, परशुराम, भरद्वाज, वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम आदि ऋषि, शुकदेव और बृहस्पति आदि भी पितामह के पास पहुँचे हैं | भीष्मजी महाराज अपने हृदय में श्यामसुन्दर की छवि को ध्यान कर रहे थे | सामने नेत्र खोल के पाण्डवन् को देखो तो आँखन में आँसू भर आये और बोले कि अरे, पाण्डव तो बड़े भक्त हैं, ये कहीं कष्ट पायवे योग्य हैं और बिचारी कुन्ती को देखो, यह बाल विधवा है | काल की लीला कौन जाने, यह बिचारी कष्ट पायवे योग्य थोड़ी है | देखो, ये जो सामने खड़े हैं, ये साक्षात् भगवान् आद्य नारायण ही हैं, इनके प्रभाव को कौन जान सकै ? पाण्डवन् से पितामह कह रहे हैं – अरे, तुम लोग इनको मामा को छोरा समझो, प्रिय समझो | अर्जुन से कह रहे हैं - तू इनको मित्र समझै, ठीक है भाई, क्यों न समझैगो, इनने कामई ऐसे किये हैं, इनकी लीलाएँ ऐसी हैं कि ये खुदई नौकर बने हैं, खुदई अपनी महिमा घटावे हैं तो तुम इनको मित्र क्यों न समझौ | जगत के पिता भगवान् होकर ये अपनी महिमा घटावें तो पितामह कह रहे हैं – अरे, ये कृष्ण प्रेम के आधीन हो जाये, दास बन जाये, अपनी महिमा को छोड़ दे, याको ऐसो स्वभाव है | प्रेम के कारण सारथी बन जाए, सूरदासजी जबही तो लिखे हैं –

"सबसे ऊँची प्रेम सगाई |
प्रेम विवश पारथ रथ हांक्यो, भूल गये ठकुराई |
ऐसी प्रीति बढ़ी या बृज में, गोपिन नाच नचाई |"

तो पितामह कह रहे हैं कि ये तो भाई प्रेम की महत्ता है कि ये तुम्हारे दूत बने, तुम्हारे सारथी बने और देखो, याते इनकी महिमा नहीं घटे, ऊँचे-नीचे कार्यन को करवे से इनकी महिमा घटे नहीं और देखो, आज जो श्यामसुन्दर यहाँ आये हैं तो क्यों आये हैं,मालूम है, ये मुझसे उपदेश सुनवावे के लिए नहीं आये हैं, वस्तुतः ये मेरे ऊपर कृपा करवे आये हैं | देखो, इनकी कृपा देख लो तुम लोग कि मैं प्राण छोड़ रहो हूँ और प्राणप्यारा सामने आ गयो है, ये कृपा है | ये वही कृष्ण हैं जिनके नाम-कीर्तन की बड़ी महिमा है | नाम को सुनते भये जो योगी प्राण को छोड़ै वो निश्चय मुक्त हो जाये |

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना ।
अमानिना मानदेन कीर्त्तनीयः सदा हरिः ॥

(शिक्षाष्टक – ३)

तिनका से भी छोटे बनो फिर और बातें स्वयमेव आ जायेंगी – सहिष्णुता, अमानिता, मानदेनता, भगवान् का कीर्तन आदि। तुम निरपराध भजन करते जाओ, भगवान् तुम्हारी जिम्मेदारी अपने-आप लेंगे, स्वयं हृदय में आकर तुम्हारे मैल को दूर कर हृदय को स्वच्छ करेंगे, योगक्षेम धारण करेंगे।

इस संसार का कोई भी नाता सच्चा नहीं है। *'प्रसतां प्रणीतः'* ये परिवार के लोग तुमको कीड़े बनकर खा रहे हैं और सारा जीवन खा जायेंगे। जैसे मादा बिच्छू से सैकड़ों बच्चे पैदा होते हैं एक साथ और सबसे पहले माँ के ही शरीर को खाते हैं और वह मोह में अपने शरीर को खिला देती है। सैकड़ों बिच्छू खा रहे हैं और वह खिला रही है क्योंकि मोह है। अनन्त कष्ट पाता है मनुष्य लेकिन मोह को नहीं छोड़ता है।

मोह सकल ब्याधिन्ह करमूला । तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला ॥

(रा.मा. उत्तर. १२१)

भक्ति का परिपोषक 'वैराग्य'

व्यासाचार्या साध्वी मुरलिकाजी द्वारा कथित 'श्रीमद्भागवत-कथा'(९/१/२०१४)

आत्मदेव ब्राह्मण जिनके कोई संतान नहीं थी, अनेकों उपाय किये लेकिन पुत्र प्राप्त नहीं हो पाया | प्राण त्याग के लिए बेचारा ब्राह्मण जंगल में चला गया | वहाँ एक सिद्ध महात्मा का दर्शन हुआ, उनके चरणों में गिरकर रोने लगा | अपना सारा दुःख उन्हें सुनाया, सन्यासी महात्मा ने उसे बहुत समझाया कि भैया ! सन्तान- प्राप्ति में कोई सुख नहीं है | भगवान् जैसी परिस्थिति में रखे, चाहे अनुकूल हो, चाहे प्रतिकूल हो, सभी परिस्थितियों में दैव विधान को देखना कि यह भगवान् की इच्छा है, भगवान् ऐसा ही चाहते हैं, प्रभु का मंगल विधान देखना ही भक्त का लक्षण है फिर तुम्हारे तो सात जन्मों तक पुत्र नहीं है | अरे ! पुत्रवानों को सुख थोड़ी होता है | भीष्म पितामह ने कौन-सी संतान उत्पन्न की थी ? मीराबाई के कौन-से पुत्र हुए थे और धृतराष्ट्र ने सौ पुत्र पैदा कर भी लिए तो क्या सुख प्राप्त कर लिया ? वस्तुतः सुख जो है, वह पुत्र प्राप्ति में नहीं है | महात्मा ने खूब समझाया, पर ब्राह्मण नहीं माने, बोले कि आप तो कृपा करें और मुझे पुत्र प्राप्ति करायें | संन्यासी महात्मन् ने आखिर में एक फल दिया, कहा कि इस फल को तुम्हारी पत्नी खा ले तो पुत्र-प्राप्ति हो जायेगी, एक वर्ष तक ये-ये नियम करने पड़ेंगे, सब कुछ बता दिया | ब्राह्मण प्रसन्न होकर लौट गया | पत्नी को वह फल दिया, धुंधली उसका नाम था, उसने फल नहीं खाया, अनेकों उल्टे-सीधे विचार मन में आने लगे | बहिन के कहने से उस फल को गाय को खिला दिया और बहिन ने कहा कि मेरे गर्भ में एक बालक है, प्रसव होने पर वह बालक मैं तुझे दे दूँगी | समय आया, बहिन के जब बालक हुआ तो रातों-रात चुपचाप से उसने बालक को धुंधली के घर पर पहुँचा दिया | अब जैसे ही बालक घर में आया, सारे नगर में हल्ला हो गया कि आत्मदेव ब्राह्मण के यहाँ एक पुत्र ने जन्म लिया है | सभी मांगलिक कृत्य शुरू हो गये | पर यह जो गुप्त रहस्य था, इसका किसी को पता भी नहीं चल पाया | इधर तीन महीने बाद उस गाय ने भी, जिसे वह फल खिलाया गया था, एक मनुष्याकार (नराकार) बालक को जन्म दिया | उसके जो कान थे, वह गाय के जैसे थे अतः आत्मदेव ब्राह्मण ने उसका नाम गोकर्ण रखा | धीरे-धीरे बालक बड़ा होने लगा और हुआ यह कि **"गोकर्णः पंडितो ज्ञानी, धुंधकारी महाखलः |"** गोकर्णजी महाराज तो परम विद्वान हुए और धुंधकारी बड़ा ही दुष्ट हुआ | दीन-दुःखियों को बहुत सताता और वेश्याओं से मित्रता करने लग गया, दुष्टों से मैत्री बढ़ाने लग गया | पिता को बड़ा कष्ट हुआ, एक दिन गोकर्णजी के पास आये और बोले – 'पुत्र ! आत्मकल्याण का कोई उपदेश दो |' गोकर्णजी महाराज ने कहा – **"असारः खलु संसारो, दुःखरूपी विमोहकः |"** पिताजी ! यह संसार असार है | इस संसार में केवल दुःख ही दुःख है | न बेटा किसी का, न धन किसी का, पर आदमी स्नेह के पाश में बँधा व्यर्थ में ही मर रहा है, जल रहा है, आसक्ति में मर रहा है, आसक्ति के पाश में बँध गया है, जैसे - दीपक में जब तक तेल है, वह दीपक जलता ही रहेगा वैसे ही संसार में ही यदि कहीं भी सूक्ष्म राग भी है तो उस संसार का वह दुःख (क्लेश) आदमी को न चाहते हुए भी भोगना पड़ेगा | सुख तो केवल वैराग्य में है | हर आदमी राग की बीमारी से ग्रस्त है | तो यह बीमारी से रोग मुक्त कैसे होगा ? इस रोग का निवारण कैसे होगा ? जब वैराग्य हृदय में आ जायेगा तब यह राग रूपी रोग भाग जायेगा | गोसाईं तुलसीदासजी महाराज ने कहा है –

जानिअ तब मन विरुज गोसांई |
जब उर बल विराग अधिकाई ||

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड- १२२)

जब वैराग्य उत्पन्न होगा तब स्वतः संसार से राग हट जायेगा | राग हटा, वैराग्य आया और मन पूर्णतः स्वस्थ हो गया, अब किसी प्रकार की भी बीमारी नहीं है क्योंकि संसार से मन विलग हो गया | संसार ही तो **"दुःखालयं अशाश्वतम्"** दुःख का घर है, दुःख का भण्डार है, जो

इसमें जायेगा, उसको दुःख तो मिलेगा ही, कष्ट भोगना ही पड़ेगा | इसलिए कहा –

ते चेद्रस्य सुखं किंचिन्न सुखं चक्रवर्तिनः ।
सुखमस्ति विरक्तस्य मुनेरेकान्तजीविनः ॥

(श्रीमद्भागवत, माहात्म्य- ४/७५)

चक्रवर्ती सम्राट को सुख नहीं है, धनवान् को सुख नहीं है, तो संसार में सुखी है कौन? जो पूर्णरूपेण विरक्त हो गया है, जिसका संसार से मन हट गया है, उसी व्यक्ति को एकमात्र सुख प्राप्त है | बीमारी से छूट जायेगा तो रोगमुक्त हो जायेगा | अनन्त सुख में चला जायेगा | गोकर्णजी ने दो श्लोक कहे हैं, श्रीमद्भागवत माहात्म्य में ये श्लोक 'गोकर्ण गीता' के नाम से प्रसिद्ध हैं और इन दो श्लोकों में भक्ति युक्त वैराग्य की बड़ी विलक्षण परिभाषा गोकर्ण जी ने कही है | वैराग्य का स्वरूप बताया | वैराग्य होगा कैसे ? वैराग्य किसे कहते हैं ?

देहेऽस्थिमांसरुधिरेऽभिमतिं त्यज त्वं
जायासुतादिषु सदा ममतां विमुञ्च ।
पश्यानिशं जगदिदं क्षणभङ्गनिष्ठं
वैराग्यरागरसिको भव भक्तिनिष्ठः ॥

(श्रीमद्भागवत, माहात्म्य- ४/७९)

अस्थि, चर्म और रक्त का बना जो यह दुर्गन्ध युक्त गन्दा शरीर है, इसमें जो हमने अभिमान जो कर लिया कि मैं शरीर हूँ, उस अभिमति को छोड़ देना चाहिए, वह त्याग देने योग्य है | अहंता छोड़ो और दूसरी चीज स्त्री, पुत्र आदि में जो ममता है, मेरेपन की भावना है, उसे भी छोड़ दो क्योंकि देखो ! जब अहंता आयी, ममता आयी और फिर जब ममता बढ़ गयी तो ममता के स्थान पर भी अहंता आ जाती है | मान लो पुत्र में किसी का बहुत राग है, बहुत प्रेम है, अब पुत्र में प्रेम हुआ, आसक्ति हुई तो पहले तो ये भावना थी कि ये मेरा पुत्र है फिर धीरे-धीरे वह आसक्ति इतनी बढ़ेगी कि वहाँ मेरे की जगह भी मैं आ जायेगा, अब बेटे को कोई थप्पड़ लगाये तो दुःखी मन अपना होता है जबकि चाँटा खुद को नहीं लगा, चाँटा लगा बेटा को लेकिन वह ममता इतनी बढ़ गयी कि ममता भी अहंता बन गयी –

ममैते मनसा यद्यदसावहमिति ब्रुवन् |

(श्रीमद्भागवतजी ४/२९/६२)

'मम्' ही 'अहम्' बन जाता है, जब प्रगाढ़ आसक्ति होती है, जब बहुत ज्यादा आसक्ति होती है तो फिर ममता भी अहंता का रूप धारण कर लेती है | पहले तो केवल था कि मैं हूँ लेकिन अब पुत्र भी मैं हूँ, स्त्री भी मैं हूँ, अब 'अहंता' इतनी ज्यादा बढ़ गयी जबकि 'अहम्' शब्द एकवचन का है, जो अकेला व्यक्ति है वह ही अपने आप को 'अहम्' कह सकता है लेकिन अब स्त्री भी मैं हूँ, पुत्र भी मैं हूँ, स्त्री को दुःख है तो खुद को दुःख होगा जबकि क्लेश तुम्हारे पास नहीं है, स्त्री को कोई बीमारी हो गयी, असाध्य रोग हो गया तो शरीर में खुद को पीड़ा नहीं है लेकिन वह जो ममता थी वह ऐसी बढ़ गयी कि वह अहंता ही बन गयी तो स्त्री को जो दुःख है, वह स्वयं को भी होने लग जाएगा | गोकर्णजी बोले – "इस ममता को भी छोड़ दो, बिलकुल छोड़ दो |" तो ये ममता कैसे छूटेगी? इसका उपाय बताया – **'पश्यानिशं जगदिदं क्षणभङ्गनिष्ठम्'** इस संसार में क्षणभंगुरता को देखो, ये बार-बार हम विचार करें कि ये संसार क्षणिक है, क्षणभंगुर है, अभी जो दिख रहा है वह थोड़ी देर बाद नहीं रहेगा तो जब बार-बार इसकी क्षणभंगुरता का विचार किया जायेगा तो अपने आप जो आसक्ति है, वह दूर हो जायेगी और हम भक्ति युक्त वैराग्य में परिनिष्ठ हो जायेंगे | देखो ! वैराग्य भी दो प्रकार का होता है | एक होता है भक्ति युक्त वैराग्य और दूसरा होता है सामान्य ज्ञानियों का वैराग्य | घर बार छोड़ दिया, साधनरत हो गये और भक्ति युक्त वैराग्य क्या है? वैराग्य का मतलब केवल यही नहीं कि खाना-पीना छोड़ दिया, खाना-पीना छोड़ने से ही अगर कोई वैरागी बनेगा तो सर्प में ये ताकत होती है कि सर्प को कुछ न मिले तो वायु पीकर रह सकता है तो सर्प से अधिक कोई वैरागी हो नहीं सकता अगर भोजन छोड़ने को ही वैराग्य कहा जाये,

घर-द्वार छोड़ कर यदि जंगल में ही रहना वैराग्य हो तो चूहे से ज्यादा वैरागी कोई नहीं है, चूहा भी अपना सारा जीवन बिल में ही रहकर काट लेता है लेकिन यहाँ कह रहे हैं **'वैरागरागरसिको भव भक्तिनिष्ठः' –** 'भक्ति युक्त वैराग्य करना' यानि जो भी हमारा त्याग हो, वह केवल भगवान् के लिए ही हो | सर्वत्याग करने के बाद केवल भगवान् का भजन ही हम करें और इधर-उधर की चीजों में न लगें और नहीं तो घर द्वार छोड़ कर आये, साधु वेश भी धारण कर लिया और फिर यहाँ आकर आश्रम के चक्करों में लगे हुए हैं तो ये भक्ति युक्त वैराग्य नहीं होगा | भक्ति युक्त वैराग्य होना चाहिए –

धर्म भजस्व सततं त्यज लोकधर्मान्
सेवस्व साधुपुरुषाञ्जहि कामतृष्णाम् ।
अन्यस्य दोषगुणचिन्तनमाशुमुक्त्वा
सेवाकथारसमहो नितरां पिब त्वम् ॥

(श्रीमद्भागवत, माहात्म्य- ४/८०)

धर्म का परिपालन करो, कैसा धर्म? लोकधर्मों को छोड़कर परमधर्म को पकड़ो | लोकधर्म क्या है ? लोकधर्म तो यह है कि माँ ने जन्म दिया तो बालक द्वारा माता की सेवा करना लौकिकधर्म है, पिता की सेवा करे, बंधु-बांधवों के प्रति जो कर्तव्य हैं उनका परिपालन करे, ये तो लौकिकधर्म हैं लेकिन भैया जब परमधर्म की बात आती है तो ये सब लौकिक धर्म छोड़ने पड़ते हैं | वेदों में कहा गया है कि 'मातृ देवो भव' 'पितृ देवो भव' अर्थात् माँ ही दैव है, पिता ही दैव है लेकिन वेद, उपनिषद का सार 'भागवतजी' को कहा गया है, जिसमें कहा गया है कि परमधर्म के लिए लौकिकधर्मों को छोड़ना पड़ता है | वैष्णवधर्म तो कहता है –

घर बसे घर बसे घर में वैराग्य कहाँ,
मोह-ममता में चित्त पागिहे है पे पागिहे ।

घर में रहकर वैराग्य नहीं हो पायेगा, घर में रहकर लौकिक धर्मों का पालन तो हो जायेगा लेकिन परम धर्म के लिए सर्वस्व त्याग करना ही पड़ेगा, सर्वस्व छोड़ना पड़ेगा जैसा कि चैतन्य महाप्रभु ने कहा है – **"विना सर्वत्यागं न हि भवति भजनं यदुपतेः ।"** बिना सर्वत्याग के परम धर्म का निर्वाह नहीं कर पाएगा कोई |

जिसमें अहम् नहीं है वह यदि सारे संसार की हत्या भी कर दे, फिर भी उसे पाप नहीं लगेगा |

दाहोद (गुजरात) ; बरसानावासिनी व्यासाचार्या श्रीमुरलिकाजी की निष्किंचना वाणी से हुआ भक्तिरस से सराबोर

परम विदुषी और अति निष्किंचन भागवत प्रवक्त्री साध्वी मुरलिका जी की भागवत सप्ताह का कार्यक्रम गुजरात के शहर दोहाद में आयोजित किया गया | उनकी कथा के रसास्वादन हेतु विशाल जनसमूह एकत्रित हुआ और सात दिनों तक सभी ने अत्यधिक श्रद्धा के साथ कथा श्रवण किया | भागवत सप्ताह कथा तो गुजरातनिवासियों ने कई बार सुनी थी परन्तु परम निष्काम साध्वी मुरलिकाजी द्वारा भागवत श्रवण करने के पश्चात् गुजरात के इस क्षेत्र के निवासियों का यही कहना था कि ऐसी भागवत कथा तो हमने अपने जीवन में कभी नहीं सुनी | इस कथा के आयोजक भी जो गुजराती सज्जन थे, वे कई वर्षों से अमेरिका में रह रहे हैं और मुरलिकाजी के अमेरिका दौरे के दौरान में गणमान्य गुजराती वैष्णवों ने अपने निवास क्षेत्र में कथा का आयोजन करवाया | गुजराती वैष्णव समाज पर ऐसा अमिट प्रभाव पड़ा कि अपने प्रदेश गुजरात में अपने गृहनगर 'दोहाद' में ही मुरलिका जी की विशाल भागवत सप्ताह का कार्यक्रम आयोजित किया और साध्वी जी ने यहाँ के जन-जन को अपनी कथा के माध्यम से अविचल-अहैतुकी-निर्गुणा भक्ति के महत्व से परिचित कराकर उसी के रंग में सबके मन को रंग दिया | गुजरात के पश्चात् सवाई माधोपुर (राजस्थान) मध्यप्रदेश और भारतवर्ष के कई अन्य प्रान्तों, नगरों में भी साध्वी मुरलिका जी के सप्ताह कथा के कार्यक्रम हैं और अप्रैल माह तक उनकी कथाओं का सतत् व्यस्त कार्यक्रम है |

भगवान् के चरण ही हम लोगों का वास्तविक घर है |

'श्रीमाताजी गौशाला' में गौ-भक्तमाल कथा का आयोजन

'गौ-संतसेवी मलुकपीठाधीश्वर श्रीराजेन्द्रदासजी महाराज की सरस वाणी में'

श्री माताजी गौशाला के एकादश वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर श्रीमाताजी गौशाला, बरसाना में गौभक्तिमहामहोत्सव के अंतर्गत गौभक्तमाल कथा का आयोजन किया जा रहा है | भारतवर्ष के प्रख्यात संत और कथा व्यास मलूकपीठाधीश्वर श्रीराजेंद्रदासजी महाराज की गौभक्तमाल कथा का ५ जनवरी २०१९ से मानमंदिर बरसाना की श्रीमाताजी गौशाला में आयोजन होने जा रहा है | यह कथा पाँच दिवस पर्यन्त चलेगी |

संत-वैष्णव सेवी होने के साथ ही साथ गौमाता के प्रति आपकी प्रबल निष्ठा है, इसीलिए गौभक्तमाल कथा के माध्यम से आप भारतवर्ष की जनता को गौमाता के प्रति जागरूक करते हुए गौ-सेवा परायण बनाने के परम पुनीत अभियान में संलग्न हैं | आपके द्वारा भारतवर्ष की कई गौशालाओं को भी आर्थिक और भावनात्मक सहयोग देकर गौरक्षा और गौसेवा के अनन्त पुण्यशाली कार्य को गति प्रदान की जा रही है | श्रीमानमंदिर के अति नि:स्पृह ब्रजनिष्ठ संत परम श्रद्धेय श्रीश्रीरमेशबाबाजी महाराज के प्रति भी श्रीराजेन्द्रदासजी महाराज प्रगाढ़ श्रद्धा और स्नेह रखते हैं और जब उन्हें अवसर मिलता है श्रीबाबामहाराज का दर्शन करने मानमंदिर अवश्य ही पधारते हैं |

परम पूज्य संत श्रीरमेशबाबा द्वारा स्थापित श्रीमाताजी गौशाला के प्रति श्रीराजेंद्रदासजी महाराज की बड़ी निष्ठा है यही कारण है कि आप अपनी कथाओं में हमेशा पूज्यश्री बाबा महाराज एवं माताजी गौशाला की चर्चा अवश्य करते हैं |

आपकी जानकारी के लिए बता दें कि श्री माताजी गौशाला की स्थापना जुलाई २००७ में पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज की पुण्यवती माताजी के नाम पर ही **'श्रीमाताजी गौशाला'** रखा गया है | पूज्यश्री की माताजी बहुत बड़ी गौभक्त थीं | उन्होंने जीवन भर गौपालन एवं गौसेवा की, उसी का परिणाम रहा कि जीवन के अंतिम ४० वर्ष ब्रजवास (गह्वरवन में वास) किया और ब्रज (गह्वरवन) में ही अपनी अंतिम श्वांस ली | पूज्यश्री की माताजी १०५ वर्ष तक जीवित रहीं |

इस गौ भक्ति महामहोत्सव में भारतवर्ष के कई प्रसिद्ध संतगण व बिभुतियों की आने संभावना है | महामहोत्सव में गौभक्तमाल कथा के अलावा प्रतिदिन गौ कीर्तन फेरी, गौ-पूजन, संध्या में गौ-महाआरती, गौ-प्रदर्शनी, गौ-भक्त सम्मान समारोह आदि गौ-महिमा मंडन हेतु अनेक कार्यक्रम भी आयोजित किये जा रहे हैं | पञ्च-दिवसीय इस आयोजन में गौमाता की महामहिमा के भक्तिमयी गान के साथ संतों एवं महापुरुषों द्वारा गौ-संरक्षण, संवर्धन व सेवा का संदेश समूचे विश्व को दिया जायेगा |

आप साधना चैनल पर प्रात: ०६ :४० से पूज्यश्री रमेश बाबाजी महाराज

एवं प्रात: ०७ :०० बजे से व्यासाचार्य राधिकेश जी का नित्य सत्संग देख सकते हैं |